❀ ॐ ❀

कलौ तद्धरिकीर्तनात्

सार-संग्रह

सं [illegible]—

ब्रह्मीभूत श्री १०८ श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज
की प्रेरणा से

कुमारी सूरजदेवी 'प्रभाकर'
श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा, रेवाड़ी।

छठा संस्करण] सन् १९६५ [मूल्य १-५० पैसे

सहगान

परम पिता पूरण प्रभु, परमानन्द अपार ।
प्रेम स्वरूप पावन परम, ईश्वर सर्वाधार ॥
दीन दयालु दयानिधे, दाता परम उदार ।
सब देवन के देव हे, दुख दोषन से पार ॥
शक्ति ज्ञान आनन्द के, हे पूर्ण भण्डार ।
सब से सुन्दर हे हरे, सब सारों के सार ॥
तेरी ऐसी हो दया हम में बढ़े मिलाप ।
संघ शक्ति का मान हो मिटे फूट का पाप ॥
मीठी माला मेल की, फेरें हम दिन रात ।
जो जीवन से एक हों, तजे कलह की बात ॥
हम में आवे एकता, भ्रातृपन का भाव ।
दिन दिन बल शक्ति बढ़े, धरम करम में चाव ॥
हाथ जोड़ हो वन्दना, तुम को बारम्बार ।
भक्ति भाव से नम्र हों, मन में श्रद्धाधार ॥

प्रस्तावना ।

—:o:—

करुणावरुणालय भगवान् को कोटिशः धन्यवाद है जिनकी महती अनुकम्पा से हमें आज इस सर्व जनोपनीत पुस्तक का पंचम संस्करण प्रकाशित करने का शुभावसर प्राप्त हुवा है। पहले संस्करणों में हम इसे यथा-क्रम नहीं कर सके थे। तृतीय संस्करण से इस पुस्तक के सब विषयों को यथाक्रम रख कर सर्व प्रकार से रुचिकर बनाने का प्रयत्न किया था। अज्ञानी जीव माया जाल में फँस कर उस परम पिता परमात्मा को विसार देता है जो जनक रूप होकर इस समस्त संसार को प्रकट करता है और पुनः प्रकटित विश्व का पालन करता है। इस कलिकाल में ऐसे भगवान के सुपुत्र कहलाने के लिये सब से सरल मार्ग उनकी भक्ति है। नवधा भक्ति में भी कीर्तन रूपी भक्ति सर्व श्रेष्ठ है। इसी हेतु भक्त जनों के लाभार्थ अपने गुरुदेव ब्रह्मीभूत श्री १०८ श्री स्वामी परमानन्द जी की प्रेरणा से श्रीमती सूरजदेवी ने जो कि साक्षात् त्याग मूर्ति हैं कठिन परिश्रम से कबीर, दादू, नानक, रैदास, मीरां आदि पूजनीय महात्माओं की वाणियों का ऐसा संग्रह किया है कि इनके एक एक शब्द परम श्रद्धा और भक्ति से युक्त हैं और जिनके भक्ति युक्त गाने से जीव का संसार सागर से उद्धार हो सकता है। इनका पूर्णानन्द तो वही प्राप्त कर सकेंगे जो श्री सद्गुरु के चरण की कृपा से इनका बार बार मनन व निदिध्यासन करेंगे। अन्त में

हमारी यही प्रार्थना है कि जो इस पुस्तक को पढ़े उनको श्रीसद्गुरु के चरणों में प्रीति हो और वह भगवान की भक्ति के अनुरागी होकर भवसागर से तरने के अधिकारी हों।

सम्वत् २०२० { भूमानन्द ब्रह्मचारी,
श्रीभगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

साधारण नियम।

१-मनुष्य का पहिला कर्तव्य है कि सद्गुरु की शरण में जावे और उनकी कृपा सम्पादन करने के लिये शुद्ध चित्त से उनकी सेवा करें।

२-उन सद्गुरु के बचनों पर दृढ़ विश्वास रक्खे।

३-एक ही मत मार्ग का अनुसरण करे।

४-साधु सज्जन का सत्संग करे।

५-विषयों के आधीन न हो।

६-शत्रुओं को मित्र बनावे।

७-अधिक उपाधि न बढ़ावे।

८-निरन्तर सारासार का विचार करता रहे।

९- भूत मात्र पर दया रक्खे।

१०-अहर्निश परमात्मा का ध्यान करके उन पर दृढ़ आस्था रखे।

—

सद्गुरु का उपदेश ।

ओ३म् तत्सत् परब्रह्मणे नमः

समुद्र जब स्थिर रहता है तब उसे ब्रह्म कहते हैं और उसी समुद्र में जब लहर उठती है तब उसी को हम शक्ति या माया कहते हैं वही देशकाल निमित्त स्वरूप है। सविशेष सगुण निर्विशेष निर्गुण उनके दो रूप हैं। पहिले रूप में वह ईश्वर जीव और जगत् है और दूसरे रूप में वह अज्ञात और अज्ञेय है । सर्वशक्तिमत्ता, सर्वव्यापकता, अनन्तदया उसी जगज्जननी, जगदम्बा, प्रेमरूपिणी भगवती के गुण हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पीछे अनन्त शक्ति विद्यामान है। एक कणविन्दु कृष्ण, बुद्ध, क्रीष्ट आदि और जगत् का विस्तार एद विन्दु को प्रकाशित करता है। एक आत्मा ब्रह्म भिन्न २ सर्व उपाधियों में प्रकाशित होता है। बड़प्पन की डींग दलबन्दी ईर्ष्या आदि सदा के लिये छोड़ दो पृथ्वी की भांति सहिष्णु हो जाओ । लड़कपन की चञ्चलता और युवापन की गम्भीरता दोनों मिलाकर सब के साथ प्रेम से रहो।

आत्मा के स्वरूप का व्यक्त और कभी अव्यक्त भाव होता है। आत्मा मानों बादलों से ढ़के हुए सूर्य की न्याई है। हृदय को समुद्र के समान महान् बना डालो, क्षुद्र भावों को पार कर जाओ, अमंगल के आने पर भी आनन्द में उन्मत्त हो जाओ, संसार को एक चित्र की भाँति देखो । जगत् में कोई

तुमको विचलित न कर सकेगा। अहन्ता को दूर कर दृढ़ता से खड़े हो जाओ। काम काञ्चन, मान, यश को छोड़कर ईश्वर को दृढ़ता से पकड़ो। विधि निषेध के घेरे में पड़े रहने से आत्मा का प्रचार नहीं होता। जो जितनी ही आत्मानुभूति का प्रकाश कर सकता है उनके उतने ही विधि निषेध कम हो जाते हैं। दूसरों की सेवा शुभ कर्म है इसी के प्रभाव से चित्त शुद्ध होता है इसी के प्रभाव से सब के भीतर बैठे हुए अन्तर्यामी भगवान् प्रकाशित होते हैं। आदेश के अनुसार संगठन करने का उद्योग करना, धर्म का यही लक्ष्य है यही उद्देश्य है। आदर्श, धार्मिक क्षमा, धृति, शौच, शान्ति, उपासना और ध्यान में परायण आदर्श का अवलम्बन विस्तार ही जीवन और संकीर्णता ही मृत्यु है। जहां प्रेम वहीं विस्तार, जहां स्वार्थता वहीं संकोच। अतएव प्रेम ही जीवन का आधार है अवश्य अहैतुक प्रेम करना चाहिये। वही एक मात्र जीवन गति का नियमन करने वाला है जिस कर्म से जीवों के मन में धीरे २ ब्रह्मभाव के उदय होने में सहायता पहुंचे वही कर्म उत्तम है। यदि किसी को अधिक सुभीता देना हो तो बलवान की अपेक्षा दुर्बल को अधिक सुभीता दो सदा दाता बनो, अपना सर्वस्व दे डालो पर बदले में कुछ न चाहो। दूसरों से प्रेम करो, सहायता करो, सेवा करो, तुम से जो कुछ बने दूसरों के लिये करो पर सावधान पलटे में कुछ न चाहो। व्यक्तिगत, देशगत, कालगत, कर्माकर्म का साधन करो।

"परोपकाराय सतांहि जीविनम्"

श्री सच्चिदानन्देश्वराय नमः

ओ३म् श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः ।

आलस्यं मृत्युरित्याहुर्यत्रं जीवनमित्युत ।

पिपीलिकाः कणशः कणशोऽभं समाहृत्य २ विवरं प्रपूरयन्ति ॥ पुत्तिका वल्मीकसञ्चयात् क्षणमपि न विरमन्ति । सूर्यादयो-ग्रहा महतावेगेन भ्रमन्तः क्षणमपि न विश्राम्ति न कांक्षन्ति । क्षणमपि स्तभिते समीरगो कथमिव व्याकुली भवन्तिजीवाः ॥

हे सच्चिदानन्द अनन्त ज्ञान स्वरूप, नित्य शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव सर्वशक्तिमान सर्व हृदयान्तर्गत सर्वव्यापक प्रभो ! यदि मैं तुमको यहां मनुष्य शरीर में रहते हुए भी अपने आत्मा में साक्षात् नहीं कर पाता तो और कहाँ पा सकूंगा ? अय मेरे प्यारे परमात्मा ! मेरे हृदय और नेत्रों में प्रकट होकर साक्षात् दर्शन दिखाओगे तो इस जीव का कल्याण होगा। परमात्मा यह न वह वरञ्च सारे पदार्थों में है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उसका जीवन चरित्र है, जो सबके हृदय में विराज-मान होकर वह स्वयं लिख रहा है। सारे पदार्थ परमात्मा के शब्द हैं और बोलते हैं कि आओ २ मेरी ओर आओ । जो ईश्वर ध्वनी को नहीं सुनता वह बहरा है। जो मनुष्य उत्पन्न हुए पदार्थों के सौन्दर्य को नहीं देखता वह अन्धा है, सौन्दर्य विवक धर्म एक ही हैं । तर्क से हम परमात्मा का चिन्तन करते हैं परन्तु सौन्दर्य साक्षात् दर्शन करता है। वह मनुष्य

जो इन सकल पदार्थों को निरीक्षण करके भी धन्यवाद गायन नहीं करता वह गूंगा है। संसार की सुन्दर वस्तुयें एक विशेष सौन्दर्य की सत्ता की साक्षी हैं। प्रत्येक मधुर वस्तु अत्युत्तम मधु को दर्शाती है। जो अन्य पदार्थों के सौन्दर्य और उत्तमता का श्रोत है उसी को परमात्मा कहते हैं। जो वस्तु ईश्वर के समीप है वह उत्तम है और जो दूर है वह निकृष्ट कहाती है। प्रत्येक पवित्रतायें उस पवित्रता के श्रोत को दर्शाती हैं। जो अच्छा है वह अपने से अत्युत्तम श्रेष्ठता के अस्तित्व का प्रमाण है। उच्च स्वर से सकल पदार्थ पुकार रहे है कि परमात्मा सब में विद्यमान् है। जब हम किसी वस्तु से प्यार करते हैं तो उसके आभ्यन्तर वास करने वाले परमात्मा के कारण से करते हैं। प्यासा मनुष्य जल की अभिलाषा इस लिये करता है कि जल में परमात्मा निवास करते हैं। परमात्मा भक्तों के हृदय में प्रकट होते हैं। महान से महान सुख अच्छे कामों के चिन्तन से होता है परमात्मा उनसे प्यार करते हैं जो बुरे कामों से घृणा कर श्रेष्ठ कार्यानुरत रहते हैं।

———

॥ तत्सत् परब्रह्मपरमात्मने नमः ॥

सार संग्रह

मङ्गलाचरण ।

विघ्नेशं विघ्नहर्तारं, गणराजं गजाननम् ।
शारदां वरदां नौमि, बुद्धिजाड्यापनुत्तये ॥ १ ॥

दोहे

सदा भवानी दाहिनी, सन्मुख रहत गणेश ।
पांच देव रक्षा करें ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ १ ॥
नमो नमो गोविन्द गुरु बिनवों अभिजन सोय ।
पहले भये प्रणाम नित नमो जो आगे होय ॥ २ ॥
नमो नमो श्रीरामजू, सत चित आनन्द रूप ।
जेहि जानत जग वत, नाशत भ्रम तम कूप ॥ ३ ॥
बन्दौं सन्त समान चित, हित अनहित नहीं कोय ।
अञ्जलि गति शुभ सुमन जिमि, सम सुगन्ध कर दोय ॥४॥

चौपाई ।

जय जय जय गिरिराज किशोरी । जय महेश मुखचन्द्र चकोरी ॥
जय गजवदन षड़ानन माता । जगत् जननि दामिनी द्यु तिगाता ॥
बन्दौं राम नाम रघुवर के । हेतु कृपानु भानु हिम करके ॥

भजन

गाइये गणपति जगबन्दन ॥
शङ्कर सुवन भवानी नन्दन ॥ टेक ॥
सिद्धिसदन गज बदन विनायक कृपासिन्धु तुम हो सब लायक ॥
मोदक प्रिय मुद मंगलदाता विद्या वारिधि बुद्धि विधाता ॥
मांगत तुलसीदास कर जोरे बसहु राम सिय मानस मोरे ॥

गोविन्दाष्टक ।

सत्यं ज्ञान मनन्तं नित्यमनाकाशं परमाकाशम् ।
गोष्ठप्राङ्गणरिङ्गणलोलमनायासं परमायासम् ॥
माया कल्पित नानाकारमनाकारं भुवनाकारम् ।
क्ष्मामानाथ मनाथं प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ १ ॥
मृत्सामस्ति हेति यशोदा, ताडन शैशव संत्रासम् ।
व्यादित् वक्त्रा लोकितलोका लोकचतुर्दश लोकालिम् ॥
लोकत्रयपुर मूलस्तम्भं लोकालोकमनालोकम् ।
लोकेशं परमेशं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ २ ॥
त्रैविष्ट्यपरिपुवीरघ्नं क्षितिभारघ्नं भवरोगघ्नम् ।
कैवल्यं नवनीताहारमनाहारं भुवनाहारम् ॥
वैमल्यस्फुट चेतो वृत्ति, विशेषाभासमनाभासम् ॥
शैवं केवल शान्तं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ३ ॥
गोपालं प्रभु लीला विग्रह, गोपालं कुल गोपालम् ।
गोपी खेलन गोवर्द्धनधृत, लीलालालित गोपालम् ॥

गोभिर्निगदित गोविन्दस्फुट नामानं बहुनामानम् ।
गोधी गोचर दूरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ४ ॥
गोपी मण्डल गोष्ठी भेदं, भेदावस्थं भेदाभम् ।
शश्वद्गोखुर निर्धूतोद्धत, धूली धूसर सौभाग्यम् ॥
श्रद्धा भक्ति गृहीत्वानन्द, मचिन्त्यं चिन्तित सद्भावम् ।
चिन्तामणि मणिमानं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ५ ॥
स्नान व्याकुल योषिद् वस्त्रमुपादायाग मुपारूढम् ।
व्यादित संवीरथ दिग्वस्त्रा, वस्त्र मुपाकर्षन्तन्ता ॥
निर्धूतद्वय शोक विमोहं, बुद्धं बुद्धेरन्तस्थम् ।
सत्तामात्र शरीरं प्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ६ ॥
कान्तं कारण कारणमादि, मनादि काल मनाभासम् ।
कालिन्दि गत कालिय शिरसि नृत्यन्तं मुहुर्नृत्यन्तम् ॥
कालं काल कलातीतं, कलिताशेषं कलिदोषघ्नम् ।
कालत्रय गति हेतुप्रणमत, गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ७ ॥
वृन्दावन भुवि वृन्दारकगण वृन्दाराधित वन्देहम् ।
कुन्दाभामल मंदस्मेर, सुधानन्दं सुहृदानन्दम् ॥
वन्द्या शेष महामुनि मानस, वन्द्यानन्दपदद्वन्द्वम् ।
वन्द्याशेषगुणाब्धि प्रणमत गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ८ ॥
गोविन्दाष्टकमेतद्धीते गोविन्दार्पित संचेता ।
गोविन्दाङ्घ्रि सरोजध्यान, सुधाजलधौत समस्ताघः ॥
गोविन्दाच्युत माधव विष्णो गोकुलनायक कृष्णेति ।
नित्यं गायनयास्यति भक्तो गोविन्दं परमानन्दम् ॥ ९ ॥

गुरोरष्टकम् ।

शरीरं स्वरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्रं धनं मेरु तुल्यम् ।
गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥ १ ॥
कलत्रं धनं पुत्र पौत्रादि सर्वं गृहं बांधवाः सर्वमेतद्धि जातम् ।
गुरोरंघ्रि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं । ततः किम्० ॥ २ ॥
षडंगादि वेदो मुखे शास्त्र विद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ३ ॥
क्षमा मण्डले भूप भूपाल वृन्दैः सदा सेवितं यस्य पादारविंदम् ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ४ ॥
यशो मे गतं दिक्षुदानः प्रतापात् जगद्वस्तु सर्वं करे यत् प्रसादात् ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ५ ॥
न भोगे न योगे न वाजि राजौ न कान्ता मुखे नैव वित्ते पु चित्तं ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ६ ॥
अरण्ये न वासः स्व गेहे न कार्ये न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ७ ॥
अनर्घ्याणि रत्नानिभुक्तानि सम्यक्समालिंगिता कामिनी यामिनिषु ।
गुरोरंघ्रि पद्मे० ॥ ८ ॥
गुरोरष्टकं यः पठेत्पुण्यदेही यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही ।
लभेद्वांछितार्थं पदं ब्रह्म संज्ञं, गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम् ॥९॥

———

गुरु भक्ति ।

सब धरती कागज करूँ, लेखनि सब बनराय।
सात सिन्धु की मसि करूं, गुरु गुण लिखा न जाय ॥ १ ॥
गुरु नाम है ज्ञान का शिष्य सीख ले सोय ।
विन पदई मर्याद विन, गुरु शिष्य नहिं होय ॥ २ ॥
परमेश्वर अरु गुरु ये, दोनों एक समान ।
सुन्दर कहत विशेष यह, गुरु ते पावें ज्ञान ॥ ३ ॥
गुरु धोबी शिष कापड़ा, साबुन सिरजनहार ।
सुरत सिला पर धोइये, निकसे रङ्ग अपार ॥ ४ ॥
तीरथ न्हाये एक फल, सन्त मिले फल चार ।
सत्गुरु मिले अनेक फल, कहे कबीर विचार ॥ ५ ॥
कबीर ते नर अन्ध हैं, गुरु को कहते और ।
हरि रूठे गुरु ठौर लखे, गुरु रूठे नहिं ठौर ॥ ६ ॥
भेदी लीना साथ में, दीनी वस्तु लखाय ।
कोटि जन्म का पन्थ था, पल में पहुंचा जाय ॥ ७ ॥
कबीर शिष्य को चाहिये, गुरु को सरवस देय ।
गुरु को ऐसा चाहिये, शिष्य का कछु न लेय ॥ ८ ॥
जैसी लौ पहिले लगी, तैसी निबहे ओड़ !
अपने तन की को गिने, तारे पुरुष करोड़ ॥ ९ ॥
सही टेक है तासू की, जाके सत्गुरु टेक ।
टेक निबाहें देह भर, रहे शब्द मिल एक ॥ १० ॥

कै खाना कै सोवना और न कोई चीत ।
सत्गुरु शब्द बिसारिया आदि अन्त का मीत ॥ ११ ॥
अंछे दिन पाछे गये, गुरु से किया न हेत ।
अब पछतावा क्या करे, चिड़िया खाना खेत ॥ १२ ॥
कबीर गुरु की भक्ति बिन नारि कूकरी होय ।
गली २ भूंत फिरे, टूक ना डारे कोय ॥ १३ ॥
कबीर यह तन जात है, सके तो ठौर लगाय ।
कै सेवा साधु की, कै गुरु के गुन गाय ॥ १४ ॥
उज्जवल पहने कापड़ा, पान सुपारी खाय ।
कबीर गुरु की भक्ति बिन, बाँधा यमपुर जाय ॥ १५ ॥
ईश्वर ते गुरु में अधिक, धारे भक्ति सुजान ।
बिन गुरु भक्ति प्रवीण हूँ, लहैं न आत्म ज्ञान ॥ १६ ॥
हरि रूठे कछु डर नहीं, तू भी दे छिटकाय ।
गुरु को राखे शीस पर, सब बिधि करे सहाय ॥ १७ ॥
मात तात भ्राता सुहृद, इष्ट देव नृप प्राण ।
अनाथ सुगुरु सब ते अधिक दान यज्ञ विज्ञान ॥ १८ ॥
वेद उदधि बिन गुरु लखे, लागैं लोन समान ।
बादर गुरु मुख द्वार है, अमृत से अधिकान ॥ १९ ॥
ऐसा दृढ़ विश्वास कर, तरे जो जीव अनेक ।
गुरु नाम है ज्ञान का, शिष्य टेक गहे एक ॥ २० ॥
कबीर मन तो एक है, भावें तहाँ लगाय ।
भावें गुरु की भक्ति कर, भावें विषय कमाय ॥ २१ ॥
मन मुरीद संसार है, गुरु मुरीद कोई साध ।

जो माने गुरु वचन को, ताका मता अगाध ॥ २२ ॥
शिष शाषा बहुतै किया, सतगुरु किया न मित्त ।
चाले थे सतलोक को, बीचहि अटका चित्त ॥ २३ ॥
बड़े बड़ाई पाय कर, रोम रोम अहंकार ।
सत्गुरु के परचे बिना, चारों बरन चमार ॥ २४ ॥
सहजो गुरु दीपक दियो, नैना भये अनन्त ।
आदि अन्त मध्य एक हीं, सूझ परे भगवन्त ॥ २५ ॥
ब्रह्म रूप अहि ब्रह्मविद, ताकी वाणी वेद ।
भाषा अथवा सत्कृत करत भेद भ्रम छेद ॥ २६ ॥
जिमि चन्द्रहिंलहि चन्द्रमणि, अमीद्रवत तत्काल ।
गुरु मुख निरखत शिष्यके, अनुभव होत विशाल ॥ २७ ॥
गुरु बिनु भ्रम लगि भूसिये, भेद लिये बिनु ज्ञान ।
केहरि वपु छाया निरखि पर्‌यो कूप अज्ञान ॥ २८ ॥
सहजो कारज जगत के, गुरु बिन पूरे नाहिं ।
हरि तो गुरु बिन क्यों मिलें, समझ देख मन माहिं ॥ २९ ॥
परमेश्वर सूं गुरु बड़े, गावत वेद पुरान ।
सहजो हरि के भक्ति है, गुरु के घर भगवान ॥ ३० ॥
अष्टादश और चार षट, पढ़ पढ़ अर्थ कराहिं ।
भेद न पावे गुरु बिना, सहजो सब भरमाहिं ॥ ३१ ॥
सकल बिकल सब छोड़ कर, गुरु चरणन चित लाव ।
सहजो निश्चय हर जपो, बहुर न ऐसो दाव ॥ ३२ ॥
सहजो सतगुरु के मिले, भये और सूं और ।
काग पलट गति हंस होय, पाई भूली ठौर ॥ ३३ ॥

सहजो गुरु ऐसे मिले, सम दृष्टि निर्लोभ ।
शिष को प्रेम समुद्र में, करदे ओबा ओब ॥ ३४ ॥
सहजो गुरु बहुतक फिरें, ज्ञान ध्यान सुधि नांह ।
तार सकें नहि एक को, गहें बहुत की बांह ॥ ३५ ॥
अठ सठ तीरथ गुरु चरण, पर्वी होत अखण्ड ।
सहजो ऐसो धाम ना, सकल अण्ड ब्रह्मण्ड ॥ ३६ ॥
गुरु आज्ञा दृढ़ कर गहे, गुरु मति सहजो चाल ।
रोम रोम गुरु को रटै, सो शिष्य होय निहाल ॥ ३७ ॥
गुरु आज्ञा माने नहिं, गुरुहिं लगावें दोष ।
गुरु निन्दक जग में दुखी, मुये न पावहिं मोष ॥ ३८ ॥
गुरु बचन हिये ले धरो, ज्यों कृपण के दाम ।
भूमि गड़े माथे दिये, सहजो लहै न राम ॥ ३९ ॥
ऐसे तो गुरु बहुत हैं, धूत नूत धन लेहिं ।
सहजो सत्गुरु जो मिले, भक्ति दान फल देहिं ॥ ४० ॥
बार बार नाते मिले, लख चौरासी मांह ।
सहजो सत्गुरु ना मिले पकर निकासे बांह ॥ ४१ ॥
सहजो गुरु दर्शन दियो, पूरि रहें सब ठौर ।
जहां तहां गुरुहि लखैं, दृष्टि न आवे और ॥ ४२ ॥
साधु मिले गुरु पाइयां, मिट गये सब सन्देश ।
सहजो को सब हो गयो, कह गिरधर कह गेह ॥ ४३ ॥
सहजो गुरु प्रसन्न हो, मूंद लिये दोऊ नैन ।
फिर मोसूं ऐसे कहो, समझ लेउ यह सैन ॥ ४४ ॥

चींटी जहां न चढ़ सके, सरसों ना ठहराय ।
सहजो को वा देश में, सत्गुरु दई बसाय ॥ ४५ ॥
जब सत्गुरु कृपा करैं, खोल दिखावें नैन ।
जग झूठा दीखन लगे, देह परे की सैन ॥ ४६ ॥

श्लोक ।

न गुरोः सदृशी माता, न गरोः सदृशः पिता ।
यस्तारयति संघोरं, संसाराब्धिं सुदुस्तरम् ॥ १ ॥

चौपाई ।

बन्दौं गुरु पद पद्म परागा । सुरुचि सुवास सरस अनुरागा ॥
मन से प्रेम राम सम राखे । ह्वै प्रसन्न गुरु इमि अभिलाखे ॥
तन करि बहु सेवा विस्तारे । आज्ञा गुरु की कबहुँ न टारे ॥
गुरु बिन ब्रह्म नहीं नर पावे । गुरु बिन तत्व कौन दर्शावे ॥
दोष दृष्टि स्वप्ने नहिं आने । हरि हर ब्रह्म गंग रवि जाने ॥
गुरु बिन भवनिधि तरै न कोई । जो विरञ्चि शंकर सम होई ॥
नैनस्त्रवे जल निजहित लागी । जरे न पावे देह विरागी ॥
कहैं सत्य प्रिय बचन विचारी । जागत सोवत शरण तुम्हारी ॥
जननी जनक गुरु बन्धु हमारे । कृपानिधान प्राण ते प्यारे ॥
मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती । गुरु कर द्रोह करौं दिन राती ॥
जे शठ गुरु सम ईर्षा करहीं । रौरव नरक कल्प शत परहीं ॥
सद्गुरु ज्ञान विराग योग के । विबुध वैद्य भीम रोग के ॥
गुरु के बचन प्रतीत न जेही । स्वप्नेहु सुगम न सुख सिधि तेही ॥

गुरु का बदला दिया न जाई। मन में उपजत है सकुचाई॥
शेष सहस्त्र मुख निशिदिन गावे। गुरु स्तुति का अन्त न पावे॥
दोहाः-सब धरती कागज करूं, लेखनी सब बनराय।
सात सिन्धु की मसी करूं गुरु गुण लिखा न जाय॥
गुरु के प्रेम पन्थ सिर दीजै। आगा पीछा कबहुँ न कीजै॥
गुरु के पन्थ होय सो होई। मागर आन चलो मत कोई॥
गुरु के पन्थ पैज का पूरा। गुरु के पन्थ चले सोई शूरा॥
गुरु के पन्थ भक्ति उजियारा। गुरु के पन्थ नहीं संसारा॥
गुरु के पन्थ चले सतवादी। सहजो पावे भेद अनादी॥
गुरु के चरण भक्ति फलदायक। सहजो गुरु के चरण सहायक॥
गुरु पग पर से बन्धन छूटे। मोह ममता की फाँसी टूटे॥
गुरु की आज्ञा दृढ़ कर गहिये। गुरु की आज्ञा ही में रहिये॥
गुरु आज्ञा बिन काज न कीजै। हानि होय तो होने दीजै॥
गुरु की आज्ञा विघ्न न होई। गुरु की आज्ञा गुरु मुख कोई॥
गुरु की आज्ञा सकल शिरोमन। गुरु की आज्ञा चले सो हरिजन
जो कोई गुरु की आज्ञा भूलै। फिर २ कष्ट गर्भ में झूलै॥
गुरु के बचन हिय बिच धारो। गुरुमुख गुरुके शब्द सम्हारो॥
गुरु के शब्द प्रेम उलझावे। गुरु शब्दों हरि आन मिलवे॥
गुरु के शब्द राह सोई चलना। वेद पुराण कहा लै करना॥
चरणदास गुरु शब्द तुम्हारे। हमरे भरम फन्द सब जारे॥
गुण सब गुरु के चरणों माहीं। सहजो शिष सो बिसरे नाहीं॥
चरणदास गुरु आज्ञा पूरी। बिन आज्ञा करनी सब कूरी॥
राम तजूं पै गुरु न बिसारूं। गुरु के सम हरि को न निहारूं॥

हरि ने जन्म दियो जग माहीं। गुरु ने आवागमन छुटाहीं॥
हरिने पांच चार दिये साथा। गुरु ने लई छुड़ाय अनाथा॥
हरि ने कुटुम्ब जाल में गेरी। गुरु ने काटी ममता बेरी॥
हरि ने करम भरम भरमायो। गुरु ने आतम रूप लखायो॥
हरि ने मोसूं आप छिपायो। गुरु दीपक दे ताहि दिखायो॥

दोहा।

श्वासों की कर सुमरनी, अजपा का कर जाप।
ब्रह्म तत्व का ध्यान धर, सोऽहं आपे आप॥

योग।

इन्द्रियन को मन वश करे, मनकूं वश करे पौन।
अनहद वश करे वायु को, अनहद को ले तौन॥ १॥
एक भंवर गुञ्जारसी, दूजा घूंघर होय।
तीजा शब्द है शंख जू, चौथा घण्टा सोय॥ २॥
पंचम ताल जो बाज ही, छटें सु मुरली नाद।
सप्तम भेरी गाज ही, अष्ट मृदङ्गहि नाद॥ ३॥
नव दश गर्जनसिंह नफीरी चरणदास सुन जोय।
पावहिं दर्शन ब्रह्म के, मनसा पूरण होय॥ ४॥
सेवक स्वामी होत है, सुने जो अनहद नाद।
जीव ब्रह्म हो जात है, पावे अपनी आद॥ ५॥
इन्द्रिय पलटे मन विषे, मन पलटे बुध माहिं।
बुधि पलटै हरि ध्यान में, फेर होय लय जाहिं॥ ६॥

देखे भृकुटि मध्य ह्वै, निश्चल दृष्टि लगाय ।
ध्यान किये पहले जहाँ, अग्नि फूल दृष्टाय ॥ ७ ॥
केते दिवसन मांह हि, दीप ज्योति प्रगटाय ।
फिर तारों की मालसी दामिनी बहु दमकाय ॥ ८ ॥
बहुत चन्द्र सूरज घने, देखे कोटि अनन्त ।
झिलमिल २ तेजमय, ध्यान मांहिं दर्शन्त ॥ ९ ॥
जल अथाह में डूब ज्यों, देखे दृष्टि उघार ।
जो दीखे सो नीर है, दशों दिशि अपरम्पार ॥ १० ॥
ज्योतिमयी मण्डल लखे, हृदय कमल में होय ।
तामें देखे और इक, दीवे की सौ लोय ॥ ११ ॥
ध्यानी ध्यान लगाय के, रहै राम लाय ।
आपा बिसरे हर मिले, बहुर न उपजे आय ॥ १२ ॥

ज्ञान ।

परमानन्द सरूप तू नहिं तो में दुःख लेश ।
अज अविनाशी ब्रह्म चित, क्यों माने हिय क्लेश ॥ १ ॥
आप भुलानो आप में, बंध्यो आप ही आप ।
जाको तू ढूंढ़त फिरे, सो तू आपहि आप ॥ २ ॥
नहिं कारण नहिं कार्य कछु, नहिं काल नहिं देश ।
शिवस्वरूप पूरण अचल, सजाति विजाति नहिं लेश ॥ ३ ॥
चली पूतरी लवण की, थाह सिन्धु की लैन ।
अनाथ आप आपे भई, पलट कहे को बैन ॥ ४ ॥

राग द्वेष मन के धरम, तू तो मन नहीं होय।
निर्विकल्प व्यापक अमल, सुख स्वरूप तू सोय ॥ ५ ॥

जैसे सांचे में पर्‌यो, होत कनक बहु अङ्ग।
नानावत यों ब्रह्म में, लय उपाधि को सङ्ग ॥ ६ ॥

ज्यों तिल माहीं तेल है, ज्यो, चकमक में आग।
तेरा प्रीतम तुझ में, जाग सके तो जाग ॥ ७ ॥

पहुप मध्य ज्यों बास है, व्याप रहा सब मांहि।
सन्तो मांही पाइये, और कहूँ कछु नाहिं ॥ ८ ॥

गागर ऊपर गागरी, चोले ऊपर द्वार।
शूली ऊपर साँथरा, तहां बुलावे यार ॥ ९ ॥

भेद ज्ञान तौलों भलो, जौलों मुक्ति न होय।
परम जात परघट, भई, तब विकल्प नहिं होय ॥ १० ॥

तू है सो परमात्मा, मैं हूँ ब्रह्म स्वरूप।
यही आत्मा ब्रह्म है, जीव है ब्रह्म स्वरूप ॥ ११ ॥

उलट समानो आप में, प्रगटी ज्योति अनन्त।
साहब सेवक एक संग, खेलें सदा बसन्त ॥ १२ ॥

अलख लखा लालच लगा, कहत आवे बैन।
निज मन धसा सहज में, सद्गुरु दीन्ही सैन ॥ १३ ॥

पिञ्जर प्रेम प्रकाशिया, जागी ज्योति अनन्त।
संशय छूटा भय मिटा, मिला पियारा कन्त ॥ १४ ॥

गुरु मिले शीतल भया, मिटी मोह तन ताप।
निस बासर सुख निधि लहूं, अन्तर प्रकटे आप ॥ १५ ॥

सत् चित् आनन्द एक तू, ब्रह्म अजन्य असंग।
विभु चेतन माया करे, जग को उत्पत्ति भंग ॥ १६ ॥

सब ही के भीतर बसे, सब का जानन हार।
वाही ते परगट भई, नाना वस्तु अपार ॥ १७ ॥

देह मरे तू है अमर, पार ब्रह्म है सोय।
अज्ञानी भटकत फिरे, लखे सो ज्ञानी होय ॥ १८ ॥

देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान।
नित न्यारो तू देह से, देह कर्म सब जान ॥ १९ ॥

डोलन बोलन सो बनो, भक्षण करन अहार।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गर्मी शीत निहार ॥ २० ॥

जाति वर्ण कुल देह की, सूरति मूरति नाम।
उपजै विनशै देह सो, पांच तत्व को ग्राम ॥ २१ ॥

पावक पानी वायु है, धरती अरु आकाश।
पांच तत्व के कोट में, आय कियो तैं वास ॥ २२ ॥

निराकार निर्लिप्त तू, देह जान आकार।
आपन देही मान मत, यही ज्ञान तत सार ॥ २३ ॥

गलै कटै काया यही, बनै मिटै फिर होय।
जीव अविनाशी नित्य है, जाने बिरला कोय ॥ २४ ॥

निराकार अद्वैत अचल, निर्वासी तू जीव।
निरालम्ब निर्वैरसो, अज अविनाशी सीव ॥ २५ ॥

चेतन ज्यों की त्यों सदा, सदा अकर्ता जोय।
सब कर्मन सों रहित है, आतम ऐसो होय ॥ २६ ॥

काहू से उपज्यो नहीं, तातें भयो न कोय।
वह न मरै मारै नहीं, राम कहाये सोय ॥ २७ ॥

दृष्टि मुष्टि आवै नहीं, रूप न देखो जाय ।
बिन सूरत बिन नाम को, घट घट रहो समाय ॥ २८ ॥
जैसे तिल में तेल है, फूल मध्य ज्यों बास ।
दूध मध्य ज्यूं घीव है, लकड़ी मध्य हुतास ॥ २९ ॥
सत चेतन आनन्द है, आदि अन्त मध्य हीन, ।
आदि अन्त आकार को, सो तू झूठा चीन ॥ ३० ॥
इन्द्रिय जान सके नहीं, मन बुद्धि लहे न थाय ।
ज्ञान दृष्टि पहिचानिये, बासों वाको पाय ॥ ३१ ॥
सब में देखे आपकूं, सबकूं अपने माहिं ।
पावै जीवन मुक्त को, या में संशय नाहिं ॥ ३२ ॥
जल थल पावक राम है, राम रमो सब माहिं ।
हरि सब में सब राम में, और दूसरा नाहिं ॥ ३३ ॥
ऊंच नीच निर्गुण गुणी, रङ्क नाथ अरु भूप ।
हूं घट बढ कासों कहूँ, सब आनन्द स्वरूप ॥ ३४ ॥
शस्त्र छेद सके नहीं, पावक सके न जारि ।
मरे मिटे सो तू नहीं, गुरु गम भेद निहारि ॥ ३५ ॥
अज्ञ तज्ञ नहिं शुभाशुभ, नहिं ईश्वर नहिं जीव ।
सत्य झूठ मो में नहीं, अमल समल त्रय पीव ॥ ३६ ॥
जैसे दिन करके उदय, दीपक द्युति दुरि जात ।
तैसे ब्रह्मानन्द में, आनन्द सभी विलात ॥ ३७ ॥
क्षुधा पिपासा हर्ष पुनि, शोक जन्म अरु अन्त ।
ये षट् उरमी धरम धन, आतम रहित अनन्त ॥ ३८ ॥

बसन भयो ता सूत में, सूतन बसन मंझारि ।
आपस में सब पूतरी करें परस्पर रारि ॥ ३६ ॥

ज्ञानी करे अनेक कर्म, विधिवत् जग व्यवहार ।
लिपे न धूप आकाश ज्यों, जान्यो जगत् असार ॥ ४० ॥

जाग्रत स्वप्न तहाँ नहीं, जहँ सुषुप्ति मन लीन ।
मैं त् तहाँ न सम्भवे, आतम निश्चय कीन ॥ ४१ ॥

जाग्रत माहिं सुषुप्ति, मतवारे की केल ।
करे चेष्टा बाल ज्यों, आतम सुख रहो झेल ॥ ४२ ॥

जैसे भूजे अन्न में उद्भवता भई छीन ।
तैसे आत्मवान की, भई जगत मति लीन ॥ ४३ ॥

जो ताकी पूजा करत, सञ्चित सुकृत सुखेत ।
दोष दृष्टि तिहि जो लखे, ताहि पाप फल देत ॥ ४४ ॥

हेतु मोक्ष को ज्ञान इक, नहीं कर्म नहिं ध्यान ।
रज्जु सर्प तब ही नशै होय रज्जू को ज्ञान ॥ ४५ ॥

वैराग ।

जगत देखि मैं परो निज, केवल दुख ता माहिं ।
सत्य २ पुनि सत्य कहुँ, सुख स्वप्ने हूँ नाहिं ॥ १ ॥

सहजो भज हरि नाम को, तजो जगत् सूं नेह ।
अपना कोई है नहीं, अपनी सगी न देह ॥ २ ॥

यही कहें गुरु देव जी, यही पुकारें सन्त ।
सहजो तज या जगत् को, तोहि तजेंगे अन्त ॥ ३ ॥

झूठा नाता जगत का झूठा है घर वास ।
यह तन झूठा देख कर, सहजो भई उदास ॥ ४ ॥

जब लग चावल धान में, तब लग उपजे आय ।
जग छिलके को तज निकस, मुक्त रूप हो जाय ॥ ५ ॥
कुटुम्ब संघाती बीच में, आदि अन्त नहिं होय ।
बीच मिले बीचहिं गये, सहजो संग न कोय ॥ ६ ॥
सहजो स्वारथ सब लगे, दारा सुत अरु बीर ।
जीवत जोते बैल ज्यों, मुये बटावें सीर ॥ ७ ॥
मर बिछुरे जो कुटुम्ब से, बहुर न देखे आय ।
महल द्रव्य सन्तान को, सहजो पचे बलाय ॥ ८ ॥
सहजो जीवत सब सगे, मुये निकट नहिं जांय ।
रोवें स्वारथ आपने, स्वपने देख डरांय ॥ ९ ॥
दरद बटाय सके नहीं, मुये न चालें साथ ।
सहजो क्योंकर आपने, सब नाते बरबाद ॥ १० ॥
सहजो गुरु परताप से, ऐसी जान पड़ी ।
नहीं भरोसा स्वाँस का, आगे मौत खड़ी ॥ ११ ॥
स्वाँस खजानों जात है, ताकि सूधी नाहिं ।
सहजो खरचो कहा रहो, कर हिसाब घर माहिं ॥ १२ ॥
झुर झुर कर पिंजरा भये, रोय गमाये नैन ।
मर गये सो नाहिं मिले, सहजो सुने न बैन ॥ १३ ॥
जो रोवे सो बाहुरे, तो रोवो दिन रात ।
तन छीजे वह ना मिले, सहजो कूड़ी बात ॥ १४ ॥
तेरा था तो क्यों मुवा, पकड़ न राखी बाहिं ।
सहजो बहुतक मिल छुटे चौरासी के माहिं ॥ १५ ॥

कबहूँक तेरा बाप है, कबहूँक तेरा पूत ।
कबहूँक तेरा मित्र है, कबहूँक तेरा दूत ॥ १६ ॥
कल्प रोय पछताय थक, नेह तजो कै क्रूर ।
पहिले ही से जो तजै, सहजो समरथ शूर ॥ १७ ॥
यों खाता यों डोलता, मीठे कहता बोल ।
वह विचार तू मत करे, चित रहे डावांडोल ॥ १८ ॥
बैठ पहर यूं चालता, बसतर भूषण लाल ।
यह विचार तू मत करै, छैल रूपी जग जाल ॥ १९ ॥
सहजो लोक परलोक की, नहीं वासना ताहि ।
सो वह ब्रह्म स्वरूप है, सागर लहर समाहि ॥ २० ॥
जाकी गुरु में वासना, सो पावे भगवान् ।
सहजो चौथे पद बसे, गावत वेद पुरान ॥ २१ ॥
परमेश्वर की वासना, अन्त समय मन माहिं ।
तन छूटे हरि क्यों मिले, उपजै विनशै नाहिं ॥ २२ ॥
चौरासी योनी भुगत, पायो मनुष्य शरीर ।
सहजो चूके भक्ति बिन, फिर चौरासी पीर ॥ २३ ॥
द्रव्य हेतु हरि को भजे, धन ही की परतीत ।
स्वारथ ले सब को मिले अन्तर की नहिं प्रीति ॥ २४ ॥

सत्संग ।

जगत मोह फांसी अजर, कटे न आन उपाय ।
जो नित सत्संगत करे, सहज मुक्त हो जाय ॥ १ ॥
कामधेनु अरु कल्पतरु, जो सेवत फल होय ।
सत्सङ्गति छिन एक में, प्राणी पावे सोय ॥ २ ॥

सत्सङ्गति निज कल्पतरु, सकल कामना देत ।
अमृतरूपी बचन कहि, तिहूँ ताप हरि लेत ॥ ३ ॥
पृथ्वी पावन होत है, सब ही तीरथ आद ।
चरणदास हरि यों कहैं, चरण धरे जब साध ॥ ४ ॥
काम क्रोध मद लोभ हनि, गर्व तजै जो साध ।
राम नाम हिरदे धरे, रोम रोम आराध ॥ ५ ॥
साधु सोवे तहाँ सोय रहूँ, भोजन संग ही जेऊं ।
जो वह गावे प्रेम से, मैं हूँ ताली देऊं ॥ ६ ॥
चक्रवति को सुख नहीं, नहीं सुखी देवेश ।
बीत राग मुनि हैं सुखी, बसैं एकान्त हमेश ॥ ७ ॥
सोई सुखी संसार में, जो सुमरे भगवान ।
राग द्वेष जाके नहीं, सोई चतुर सुजान ॥ ८ ॥
भोजन छादन की नहीं, सोच करे हरिदास ।
विश्वभरण प्रभु करत हैं, सो किमि करैं निरास ॥ ९ ॥
बिनु सतसंग न हरि कथा, तेहि बिनु मोह न भांग ।
मोह गये बिनु राम पद, होई न दृढ़ अनुराग ॥ १० ॥
मुक्ति द्वार पालक चतुर, सम सन्तोष विचार ।
चौथी सतसंगत धरम, महापूज्य निरधार ॥ ११ ॥
जो वह दया करैं तेरे पर, प्रेम पिलावें भंग ।
जाके अमल दरश हूँ, हरि को नैना आवे रंग ॥ १२ ॥
सुत दारा अरु लक्ष्मी, पापी के भी होय ।
सन्त समागम हरि कथा, तुलसी दुर्लभ दोय ॥ १३ ॥

जब लग आश शरीर की निर्भय भया न जाय।
काया माया मन तजै, चोरें रहे बजाय ॥ १४ ॥
कथा कीर्तन कलि विषे, भवसागर की नाव।
कहे कबीर जग तरन को, नाहिंन और उपाव ॥ १५ ॥
कथा कीर्तन सुनन को, जो कोई करे सनेह।
कहे कबीर ता दास की मुक्ति में नहिं सन्देह ॥ १६ ॥
सुरती जो हर मिलन की, तो करिये सत्संग।
बिना परिश्रम पाइये, पूरण परमानन्द ॥ १७ ॥
सन्त संग अपवर्ग कर, कामी भव कर पन्थ।
कहहिं सन्त कवि कोविद, श्रुति पुराण सद्ग्रन्थ ॥ १८ ॥
जब जब दर्शन राम दे, तब मागौं सत्संग।
चाहों पदवी भक्त की, चढ़े सो नवधा रंग ॥ १९ ॥
नर संसारी लग्न में, दुख सुख सहे करोर।
नारायण हरि भजन में जो होवे सो थोर ॥ २० ॥
नारायण कीजे सदा, दुष्ट संग का त्याग।
जिमि लुहार के ढिग परे, बदन चिंगारी आग ॥ २१ ॥
अर्ब खर्ब लों द्रव्य हैं, उदय अस्त लों राज।
तुलसी जो निज मरण है, तो आवे केहि काज ॥ २२ ॥
सिंहों के लैंहडे नहीं, हंसों की नहीं पात।
लालों की नहिं बोरियां, साधु न चले जमात ॥ २३ ॥
जात पात नहिं पूछिये साधु को कुछ लीजिए ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान ॥ २४ ॥
रवि को तेज घटे नहीं, जो घन जुड़े घमण्ड।
साधु बचन पलटे नहीं, पलट जाय ब्रह्माण्ड ॥ २५ ॥

जननी जने तो भक्त जन, कै दाता कै शूर ।
नाहीं तो तू बांझ रह, काहे गंवाये नूर ॥ २६ ॥
ग्रह गांठ, नहीं बांधते, जब देखे तब खाहिं ।
हरि तिन के पीछे फिरै, मत भूखे रह जाहिं ॥ २७ ॥
जा घर साधु न सेवई, हरि की सेवा नाहिं ।
ते घर मरघट सार के, भूत बसे ता माहिं ॥ २८ ॥
सुन्दर मानुष देह की, महिमा वरणें साच ।
जामें बसके पाइये, पूरण ब्रह्म अगाध ॥ २९ ॥
काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह की धार ।
तिन में अति दारुण दुखद, माया रूपी नार ॥ ३० ॥
एक अज्ञानी के हिये, बर्तें मते अनेक ।
अनाथ सुज्ञानी कोटि को निश्चय नित्र मत एक ॥ ३१ ॥
आज्ञानी आसक्त मति, करे सुबन्धन हेत ।
ज्ञानी के आसक्ति नहिं, तजे न कछु गह लेत ॥ ३२ ॥
भ्रमण करत जो पवन तें, सुखो पीपर पात ।
शेष करम प्रारब्ध से, क्रिया करत दरशात ॥ ३३ ॥
एक घड़ी आधी घड़ी आधी हूँ में आध ।
तुलसी संगत साधु की, गहे कोटि अपराध ॥ ३४ ॥
साधु की निन्दा बुरी, मत कोई कीजो भूल ।
दुनियां में दुख पाइये, रहे नरक नरक में भूल ॥ ३५ ॥
रक्त छाँड़ि पय को गहे, ज्यों रे गउ बच्छ ।
औगुन छाँड गुन को गहे, ऐसा साधु लच्छ ॥ ३६ ॥
छाजन भोजन प्रीति सो, दीजे साधु बुलाय ।
जीवत यश जगत में, अन्त परम पद पाय ॥ ३७ ॥
दोय बख्त ना कर सके, तो दिन में कर इक बार ।
कबीर साधू दरशते, उतरे भवजल पर ॥ ३८ ॥

कबीर मेरे साधु की, निन्दा करो मत कोय ।
जो पै चन्द कलंक है, तउ उजियारा होय ॥ ३६ ॥
जो मोय अरपे प्रीति से, सन्तन सुख होय खाऊं ।
सन्तन के मैं संग रहूँ, अन्त कहूँ नहिं जाऊं ॥ ४० ॥
साधू महिमा को कहे, शोभा अधिक अपार ।
रसना दोय हजार सों, शेषहूं जावैं हार ॥ ४१ ॥
भवसागर से तारि कर, ले जावे बहु जीव ।
साधू केवट राम के, पार मिलावें पीव ॥ ४२ ॥
सन्त मिलन को जाइये, तज माया अभिमान ।
ज्यों २ पग आगे धरे, त्यों त्यों यज्ञ समान ॥ ४३ ॥
विधिवत यज्ञ करै सदा, जो द्विज उत्तम गोत ।
साधु निकट चलि जात ही, सो फल पग २ होत ॥ ४४ ॥
दर्शन कीजे साधु का, कै गुरु का कर लेय ।
जहं तहं ब्रह्महिं देखिये, दुविधा दुर्मति हेय ॥ ४५ ॥
ना सुख दारा सुत महल, ना सुख भूप भये।
साधु सुखी सहजो कहे, तृष्णा रोग गये ॥ ४६ ॥
ना सुख विद्या के पढ़े, ना सुख वाद विवाद ।
साधु सुखी सहजो कहे, लागी सुन्न समाद ॥ ४७ ॥
खाली साधु न भेटिये, सुख लीजे सब कोय।
कहे कबीरा भेट धर, जो तेरे घर होय ॥ ४८ ॥
साधु मिले साहब मिले, अन्तर रही न रेख ।
मनसा वाचा कर्मना, साधू साहब एक ॥ ४९ ॥

आचार

प्रभु चाहे सोई करे, ताकूं टोके कौन ।
देख २ अचरज रहा, चरणदास गह मौन ॥ १ ॥
सब रङ्ग तेरे तैं रङ्गे, तू ही सब रङ्ग मांहिं ।
सब रंग तेरे तैं किये, दूजा कोई नाहिं ॥ २ ॥
वैसा तो रंगरेज ना, वैसा छीपी नाहिं ।
वैसा कारीगर नहीं, या दुनियां के माहिं ॥ ३ ॥
तुलसी या संसार में, सब से मिलिये धाय ।
ना जानू काहू भेष में, नारायण मिल जाय ॥ ४ ॥
सब तज कर मोको भजे, मोही सेती प्रीति ।
मैं भी उनके कर बिक्यो, यही जू मेरी रीति ॥ ५ ॥
मन सों रहु निर्वैरता, मुख सों मीठा बोल ।
तन सूं रक्षा जीव की, चरणदास कह खोल ॥ ६ ॥
खांडा पकरे सील का, काम हने तत्काल ।
शील बिना नरके परे, शील बिना बेहाल ॥ ७ ॥
आज्ञाकारी पीव की, रहे पिया के सङ्ग ।
तन मन सूं सेवा करे, और न दूजा रङ्ग ॥ ८ ॥
काटे पर कदली फले, कोट यत्न कर सींच ।
विनय न मान खगेश सुन, डाटे पै नव नीच ॥ ९ ॥
जड़ चेतन गुण दोषमय, विश्व कीन कर्तार ।
सन्त हंस गुण गहत हैं, पर हरि वारि विकार ॥ १० ॥

सब जीवन सुख दीजिये, सब से मीठा बोल।
आतम पूजा कीजिये, पूजा यही अतोल ॥ ११ ॥
आशा की डोरी बन्धी, क्षण घर में क्षण द्वार।
स्थिरता नहीं सन्तोष बिनु, दुखी पिङ्गला नार ॥ १२ ॥
उड़ती देखी चील को, पङ्ख माहिं मांस।
बहु पक्षी घेरे फिरैं, लेन देवें स्वांस ॥ १३ ॥
अजगर करे न चाकरी, पक्षी करे न काम।
दास मलूका यों कहै, सब का दाता राम ॥ १४ ॥
परनारी कै आपनी, दोनों बुरी बलाय।
घर बाहर की आग ज्यों, देवे हाथ जलाय ॥ १५ ॥
शरणगत को जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि।
ते नर पामर पापमय, तिनहिं विलोकत हानि ॥ १६ ॥
सूरा सोई पिछानिये, लड़े धर्म के हेत।
पुरजा २ कट पड़े, तब हु न छोड़े खेत ॥ १७ ॥
सन्मुख आये शत्रु को, जीत लेत धन धाम।
इतने ही में स्वर्ग सुख, होत स्वामी को काम ॥ १८ ॥
हुई गरज मन और था, मिटी गरज मन और।
उदयराज मन की प्रकृति, रहै न एकहि ठौर ॥ १९ ॥
तुलसी कहत पुकार के, सुनो सकल दे कान।
हेम दान गज दान से, बड़ो दान सन्मान ॥ २० ॥
धन देके तन राखिये, तन दे रखिये लाज।
तन धन दोनों दीजिये, एक प्रीति के काज ॥ २१ ॥

एक बड़ो दूजे अग्नि, भरम पोल ता माहिं ।
चौथे गांठ कुबुद्धि की, याते भेदत नाहिं ॥ २२ ॥
यथा लाभ सन्तोष सुख, रघुपति चरण सनेह ।
तुलसी जो मन वश रहे, जस कानन तस गेह ॥ २३ ॥
तन कर बन कर बचन कर, देत न काहू दुःख ।
तुलसी पातक झरत है, देखत उनको मुख ॥ २४ ॥
जो कुछ आवे सहज में, सोई मीठा जान ।
कड़ुवा लागे नीम सा, जामें ऐंचातान ॥ २५ ॥
राज दुवारे साधुजन, तीन वस्तु को जाय ।
कै मीठा कै मान को, कै माया की चाय ॥ २६ ॥
संस्कृत है कूप जल, भाषा बहता नीर ।
भाषा सद्गुरु सहत है, सद्गुरु गहन गंभीर ॥ २७ ॥
भूप दुःसी अवधू दुखी, दुखी रङ्क विपरीत ।
कहे कबीर वह सब दुखी, सुखी सन्त मन जीत ॥ २८ ॥
परारब्ध पहले बनी, पीछे बना शरीर ।
तुलसी यह आश्चर्य है, मन नहिं बांधे धीर ॥ २९ ॥
पण्डित केरी पोथियां, ज्यों तीतर को ज्ञान ।
औरन सगुण बतावहिं, आपा फन्द न जान ॥ ३० ॥
सतसुरु सङ्ग सांची कथा, कोई न सुनही कान ।
कलियुग पूजा दम्भ की, बाजारी को मान ॥ ३१ ॥
ऊंचे पानी ना टिके, नीचे ही ठहराय ।
नीचा होय सो भर पिये, ऊंच पियासा जाय ॥ ३२ ॥

भेद भावना मिट गई, क्लेश भये सब दूर।
जित देखो उत ही दीखे, महादेव भरपूर ॥ ३३ ॥

रे मूरख जिन के लिये, खपता है दिन रात।
अन्त काल ना सुनेंगे, वें तेरी एक बात ॥ ३४ ॥

राग मूल संसार है, राग मिटे मिट जाय।
नाश हुए जिमि तैल के, दीपक ज्योति बिलाय ॥ ३५ ॥

दान दीन को दीजिये, मिटे दरद की पीर।
औषद् ताको दीजिये, जाके रोग शरीर ॥ ३६ ॥

दादू आदर भाव का, मीठा लागे मोठ।
बिन आदर व्यञ्जन बुरा, जीमन वाला ठोठ ॥ ३७ ॥

धर्म जाता धर पलटता, त्रिया षडन्ता ताव।
ये तीनों दिन मरण के, कहा रङ्क कहा राव ॥ ३८ ॥

पाप निवारत हित करत, गुन गिन औगुन ढांक।
दुख में राखत देत कछु, सत मित्रन ये आंक ॥ ३९ ॥

इक तरु सुखे को अगनि, जारत सब बनराय।
त्यों ही पूत कपूत में, वन्श समूल नशाय ॥ ४० ॥

परमुख सेवक परिखिये, बान्धव दुख: की बार।
मित्र सु आपत काल में विभव हानि में नार ॥ ४१ ॥

बात कहन की रीति में, है अन्तर अधिकाय।
एक बचन ते रिस बढ़े, एक बचन ते जाय ॥ ४२ ॥

मधुर बचन ते जात मिट, उत्तम जन अभिमान।
तनक शीत जलते मिटे, जैसे दूध उफान ॥ ४३ ॥

आवत गाली एक है, उलटत होय अनेक।
कहे कबीर ना उलटिये, वही एक ही एक ॥ ४४ ॥

बहुतन को न विरोधिये, निबल जान बलवान ।
मिल भख जाँय पिपीलिका नागहिं नगके मान ॥ ४५ ॥
ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय ।
औरन को शीतल करे, आपही शीतल होय ॥ ४६ ॥
बोली तो अनमोल है जो कोई जाने बोल ।
हिया तराजू तोल कर, तब मुख बाहर खोल ॥ ४७ ॥
शब्द बराबर धन नहीं, जो कोई जाने बोल ।
हीरा तो दामों मिले, शब्द का मोल न तोल ॥ ४८ ॥
जूआ खेलत होत है, सुख सम्पति को नास ।
राज काज नल ते छुट्यो, बसे पाण्डु बनवास ॥ ४९ ॥
समय न चूके चतुर नर, कहत कबीजन कूक ।
चतुरन के खटके हिये समय चूक की हूक ॥ ५० ॥
देह विषे बल गेह धन, जस इन पुन परलोक ।
चार बचाइ इन्द्रीन के, कीजै भोग अशोक ॥ ५१ ॥
जा दिन विद्या धरम को जस को लाभ न होय ।
विदुर कहैं धृतराष्ट्र ते बन्ध्य काल है सोय ॥ ५२ ॥
आलस बैरी तन बसत, सब सुख को हर लेत ।
त्यों उमदा सों बन्धुता, किये सकल सुख देत ॥ ५३ ॥
तीनहुँ राखै दृष्टि में, तीन न बिगरन देत ।
तीन पिछानै बिमल मति, सबको बस कर लेत ॥ ५४ ॥
कृपण जनत धनरो करे, कायर जीव जतन्न ।
सूर जतन उनरो करे, जिनरा स्वाया अन्न ॥ ५५ ॥
ना कुछ करो न कर सको, ना कछु करने योग ।
तुलसी आये संसार में, भले हँसाये लोग ॥ ५६ ॥
दादू पछतावा रह्या, सके न ठोहर लाय ।
अरथ न आया राम के, यह तन यों ही जाय ॥ ५७ ॥

जाको रक्खे साइयां, मार न सके कोय ।
बाल न बांका कर सके, जो जग बैरी होय ॥ ५८ ॥
जेती लहर समुद्र की, तेती मन की दोड़ ।
सहजो हीरा नीपजे, जो मन आवे ठोर ॥ ५९ ॥
दौड़त दौड़त दौड़ियां जहं लग मन की दौड़ ।
दौड़ थकी मन थिर भया वस्तु ठौर की ठोर ॥ ६० ॥
पढ़ना गुनना चातुरी, यह तो बात सहल ।
कामदहन मन वश करन, गगन चढ़न मुशकल ॥ ६१ ॥
नाम भजो मन वश करो, यही बात है तन्त ।
काहे को पढ़ पच मरयो, कोटिन ज्ञान ग्रन्थ ॥ ६२ ॥
अपने उरझे उरझियां, दीखे सब संसार ।
अपने सुरझे सुरझियां, यह गुरु ज्ञान विचार ॥ ६३ ॥
मन दाता मन लालची, मन राजा मन रंक ।
जो यह मन गुरु से मिले, तो गुरु मिले निशङ्क ॥ ६४ ॥
मन के बहुते रङ्ग में हैं, छिन छिन बदलें सोय ।
एक रङ्ग में जो रहे, ऐसा विरला कोय ॥ ६५ ॥
कोटि करम पल में करे, यह मन विषयास्वाद ।
सत्गुरु शब्द न मानहीं, जन्म गंवाये बाद ॥ ६६ ॥
तन को योगी सब करे, मन को करे न कोय ।
सहजै सब सिध पाइये, जो मन योगी होय ॥ ६७ ॥
मन ही अपना शत्रु है, मन ही अपना मित्त ।
संसारी मन शत्रु है, परमारथ रत मित्त ॥ ६८ ॥

दुनियां स्वप्न समान यह, क्या भरमा मन देख ।
आंख खुले कछु है नहीं, उपजे ज्योंहि विवेक ॥ ६६ ॥
घायल उपर घाव ले, टोटे त्यागी होय ।
भरि यौवनमें शीलवन्त, कोई विरला होय तो होय ॥ ७० ॥
ज्ञानी ध्यानी संयमी, दाता सूर अनेक ।
जपिया तपिया बहुत हैं, शीलवन्त कोई एक ॥ ७१ ॥
मांगन मरन समान है, मत मांगो कोई भीख ।
मांगन ते मरना भला, यह सत्गुरु की सीख ॥ ७२ ॥
कोटि करम लागे रहें, एक क्रोध की लार ।
किया कराया सब गया, जब आया अहंकार ॥ ७३ ॥
साध सन्तोषी सर्वदा, निर्मल जिनके बैन ।
तिनके दर्शन परस ते, जिय उपजै सुख चैन ॥ ७४ ॥
छाया माया एकसी, बिरला जाने कोय ।
भगतां के पीछे लगी, सन्मुख भागे सोय ॥ ७५ ॥
आँधी आई प्रेम की, ढई भरम की भीत ।
माया टाटी उड़ गई, लगी नाम सों प्रीति ॥ ७६ ॥
मूरख के समझावते, ज्ञान गांठ का जाय ।
कोयला होय न ऊजरा सो मन साबुन लाय ॥ ७७ ॥
परनारी के राचने सीधा नरक को जाय ।
तिन को यम छांड़े नहीं कोटिन करे उपाय ॥ ७८ ॥
परनारी पैनी छुरी, मति कोई करो प्रसङ्ग ।
दस मस्तक रावण गये, परनारी के सङ्ग ॥ ७९ ॥

बार बुलावे भाव से, मो पै गया न जाय ।
धन मेली पिय ऊजारा, लाग न सक्कूं पाय ॥ ८० ॥
जूआ चोरी मुखबरी, ब्याज घूंस परनार ।
जो चाहे दीदार को, एती वस्तु निवार ॥ ८१ ॥
पण्डित और मसालची, दोनों सूझे नाहिं ।
औरन को करें चांदना, आप अन्धेरे माहिं ॥ ८२ ॥
समदृष्टि सतगुरु किया, मेरा भरम विकार ।
जहँ देखूं तहँ एक ही, साहब का दीदार ॥ ८३ ॥
ज्ञानी मूल गवाइयां, आप भये करता ।
ताते संसारी भला, जो सदा रहे डरता ॥ ८४ ॥
कोई तो तन मन दुःखी, कोई चित्त उदास ।
एक एक दुख सबन को, सुखी सन्त का दास ॥ ८५ ॥
तुलसी सम्पति के सखा, पडत विपति में चीह्न ।
सज्जन कञ्चन कसन को, विपति कसौटी कीह्न ॥ ८६ ॥
नीच २ सब तर गये, सन्त चरन लौ लीन ।
जाति के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥ ८७ ॥
ज्यों कदली के पात में, पात पात में पात ।
त्यों चतुरन की बात में, बात बात में बात ॥ ८८ ॥
सरस कविन के हृदय को, बेधत है सो कौन ।
असमझवार, सराहिबो, समसर की मौन ॥ ८९ ॥
ऊजड़ खेड़ा फिर बसे, निरधनियां धन होय ।
बीता दिन नहीं बाहुड़े, मुवा न जीवे कोय ॥ ९० ॥

नाच कूद मद पीवते, घर घर होते राग ।
ते मन्दिर खाली पड़े, बैठन लागे काग ॥ ९१ ॥

हंस सरोवर ना तजो, जो जल खारो होय ।
डाबर डाबर डोलता, भलो न कहसी कोय ॥ ९२ ॥

कहां हेमन्त शीतल भगो, हरे रूख जल जांय ।
ताते तो ग्रीष्म भलो, जरे हरे हो जांय ॥ ९३ ॥

गज मुख ते तन्दुल गिर्‌यो, घट्यो न तासु आहार ।
सो ले चली पिपीलिका, पालन को परिवार ॥ ९४ ॥

इति पुट घट सम अज्ञ जन मेघ समान सुज्ञान ।
पढें वेद इहि हेतु तें, ज्ञानी पै तजि आन ॥ ९५ ॥

जग रचना सब झूठी है, झूठा सब व्यवहार ।
भक्ति करो तो भव तरो, यही वेद का सार ॥ ९६ ॥

वह दिन गये अकार्थी, संगत भई न सन्त ।
प्रेम बिना पशु जीवना, भक्ति बिना भगवन्त ॥ ९७ ॥

चतुराई चूल्हे परी, भट्टी परे अचार ।
तुलसी हरि की भक्ति बिन, चारों वर्ण चमार ॥ ९८ ॥

परमानन्द कृपायतन, मन परि पूरित काम ।
प्रेम भक्ति अनपायिनि, देहु हमहिं श्रीराम ॥ ९९ ॥

यद्यपि प्रथम दुख पावहीं, रोवै बाल अधीर ।
व्याधि नाश हित जननी, गिनै न सौ शिशु पीर ॥ १०० ॥

रचनहार को चीह्नले, खाने को क्या रोय ।
दिल मन्दिर में बैठ कर, तान डुपट्टा सोय ॥ १०१ ॥

कबीर रोड़ा हो रह बाटका, तज मन का अभिमान ।
ऐसा जो कोई दास हो, ताहि मिलै भगवान ॥ १०२ ॥

रोड़ा हुआ तो क्या हुआ, पक्षियों को दुख देय।
हरि जन ऐसा चाहिये, ज्यों धरनी की खेय॥ १०३॥
खेह हुई तो क्या हुवा, उड़ उड़ लागे अंग।
हरि जन ऐसा चाहिये, ज्यों पानी सरवंग॥ १०४॥
पानी हुआ तो क्य हुआ, तत्ता शीला होय।
हरि जन ऐसा चाहिये, जैसा हरि ही होय॥ १०५॥
भक्त हमारो पग धरे, जहां धरूँ मैं हाथ।
लारे लाग्यो ही फिरूँ, कबहु न छोडूं साथ॥ १०६॥
मोको वश कियो जो चाहे; भक्तन की कर सेव।
उनमें ह्वै कर मैं मिलूं, करूँ बहुत ही हेव॥ १०७॥
मम भक्त जित २ फिरें, गवनै लागा जाऊं।
जहां तहां रक्षा करूं, भक्त वछल मेरो नाऊं॥ १०८॥
मेरे जन मोमें रहें, मैं भक्तन के मांहि।
मेरे अरु मम सन्त में, कछु भी अन्तर नांहि॥ १०९॥
पुरुष नपुंसक नारि नर, जीव चराचर कोय।
सर्व भाव भज कपट तज, मोहि परम प्रिय सोय॥ ११०॥
व्यापक सकल अनीह अज, निर्गुण नाम न रूप।
भक्ति हेतु नाना विधहिं, करत चरित्र अनूप॥ १११॥
विद्या धन कुल रूप मद, प्रभूता यौवन नारि।
ये बाधक हरि भक्त के, कहें बुधि वेद विचारी॥ ११२॥
भक्तिभाव को छोड़कर, करी दम्भ की हाट।
मुक्ति पन्थ को तज दिया, लई नरक की बाट॥ ११३॥

भक्त संग छोड़ो नहीं, सदा रहत नित पास।
जहां न आदर भक्त को, तहां न मेरा बास ॥ ११४ ॥
निराकार निर्गुण प्रभु, तदपि सगुण धरे देह।
करत रहत नानां चरित, केवल भक्त सनेह ॥ ११५ ॥
निजमुख ते भाष्यो यही, भक्ति अति ही प्रिय मोय।
भक्त वचन उलंघो नहीं, अविहित विहित जो होय ॥ ११६ ॥
रावणारि यश पावन गावहिं सुनहिं जे लोग।
राम भक्ति दृढ़ पावहिं, बिन वैराग्य जप योग ॥ ११७ ॥
यह सो भक्ति आलिंगिनी, बिरला जाने भेव।
भाग होय तो पाइये, समझावे गुरुदेव ॥ ११८ ॥
झूटे सुख को सुख कहे, मानत है मन मोद।
जगत चबेना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद ॥ ११९ ॥
बाव पलक की सुध नहीं, करे काल का साज।
काल अचानक मारसी, जो तीतर को बाज ॥ १२० ॥
आये हैं सो जांयगे, राजा रङ्क फकीर।
एक सिंहासन चढ़ चले इक बांधे जात जंजीर ॥ १२१ ॥
दुर्लभ मानुष जन्म है, देह न बारम्बार।
तरुवर से पत्ता झड़े, बहुर न लागे डार ॥ १२२ ॥
देह धरे का गुण यही, देह देह कुछ देह।
कहे कबीरा देह तू, जब लग तेरी देह ॥ १२३ ॥
देह खेह हो जायगी, फिर कौन कहेगा देह।
निश्चय कर उपकार ही, जीवन का फल येह ॥ १२४ ॥

या दुनियां में आय के, छाँडि देय तू ऐंठ ।
लेना होय सो लेय ले, उठी जात है पैंठ ॥ १२५ ॥
नानक नन्हा हो रहो, जैसी नन्ही दूब ।
बड़ी घास जल जायगी, दूब खूब की खूब ॥ १२६ ॥
कबीर आप ठगाइये, और न ठगिये कोय ।
आप ठगे सुख ऊपजे, और ठगे दुख होय ॥ १२७ ॥
जन्म मरण दुख याद कर, कुड़े काम निवार ।
जिन २ पन्थों चालना, सोई पन्थ संवार ॥ १२८ ॥
कबीर खेत किसान का, मिरगों खाया झाड़ ।
खेत बिचारा क्या करे, जो धनी करे नहि बाड़ ॥ १२९ ॥
जेहि घट प्रति न प्रेम रस, पुनि रसना नहिं नाम ।
ते नर पशु संसार में, उपज मरे बेकाम ॥ १३० ॥
तुलसी या संसार में, पांच रत्न हैं सार ।
सन्त मिलन अरु हरि भजन, दया दीन उपकार ॥ १३१ ॥
काम क्रोध मद लोभ की, जब लग मन में खान ।
तुलसी पण्डित मूरखा, दोनों एक समान ॥ १३२ ॥
निज अवगुण राम के, समझे तुलसीदास ।
होय भलो कलिकाल में, उभय लोक अनियास ॥ १३३ ॥
आँख कान मुख मूंद कर, नाम निरञ्जन लेय ।
अन्दर के पट जब खुलें, बाहर के पट देय ॥ १३४ ॥
जो तोकं काटा बुवे, ताहि बोय तू फूल ।
तोकों फूल के फूल हैं, वाको हैं तिरशूल ॥ १३५ ॥
तेरे भाँवे कछु करो, भलो बुरो संसार ।
नारायण तू बैठ के, अपनो भवन बुहार ॥ १३६ ॥

क्षनिक बड़ाई पाय के, मनमें अधिक गरूर ।
नारायण जिन बैठ के मग, साहब का घर दूर ॥ १३७ ॥
चात्रिक सुतहिं पढ़ावहीं, आन नीर मत लेय ।
मम कुल ये ही रीति है, स्वाँति बूंद चित्त देय ॥ १३८ ॥
जा मरने से जग डरे, मेरे मन आनन्द ।
कब मरहूं कब पायहूं, पूरण परमानन्द ॥ १३९ ॥
धीरे धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होय ।
माली सींचे केवड़ा, ऋतु आये फल होय ॥ १४० ॥
जहां दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहाँ पाप ।
जहाँ क्रोध तहाँ काल है, जहाँ क्षमा तहां आप ॥ १४१ ॥
अमृत भरे मनवचन, निशिदिन पर उपकार ।
परगुण मानत मेरु सम, बिरले जन संसार ॥ १४२ ॥
सरस्वति के भण्डार की, बड़ी अपूरव बात ।
ज्यों खरचे त्यों २ बढ़े, बिन खरचे घट जात ।।१४३ ॥
आप बुरो जग है बुरो, भलो भले जग मान ।
तजत बहेरा छांह सब, गहत आम की आन ॥ १४४ ॥
सेवक सोई जानिये, देत विपत्ति में संग ।
तन छाया ज्यों धूप में, रहे साथ इक संग ॥ १४५ ॥
सब से लघु है मांगिबो, यामें फेर न सार ।
बलि पै जांचत हो भये, बावन तन करतार ।। १४६ ॥
बसवंत वास सराय का, क्या सोवे भर नैन ।
स्वाँस नगारे कूंच के, बाजत हैं दिन रैन ॥ १४७ ॥
उठ फरींदा जाग रे, जागन की कर चौंप ।

ये दम हीरा लाल है, गिन गिन हरी को सौंप ॥ १४८ ॥
सब से मीठा बोलना, करना पर उपकार ।
नारायण या जगत में, यह दो बातें सार ॥ १४९ ॥
सम्मन रोवे कौन को, हंसे सो कौन विचार ।
गये सो आवन के नहीं, रहे सो जावनहार ॥ १५० ॥
जो जाके शरने बसे ताकी बाको लाज ।
जल सोंहीं मछली चढ़े बहे जांय गजराज ॥ १५१ ॥
देख पराई चोपड़ो, मत ललचावे जीव ।
रूखी सूखी खाय के, ठण्डा पानी पीव ॥ १५२ ॥
गोधन गजधन वाजिधन, और रत्न धन खान ।
जब आवे सन्तोष धन, सब धन धूरि समान ॥ १५३ ॥
गिरिये पर्वत शिखिर ते, परिये धरण मंझार ।
दुष्ट संग नहिं कीजिये, डोवे कालीधार ॥ १५४ ॥
पपिहा प्रण को ना तजे, तजे तो तन बेकाज ।
तन छूटे तो कछु नहीं, प्रण छूटे है लाज ॥ १५५ ॥
चोट सुहेली सेल की, लागत लेत उसांस ।
चोट सहारे शब्द की, तासु गुरु मैं दास ॥ १५६ ॥
तुलसी मीठे बचन से, सुख उपजे चहुं ओर ।
वशीकरण यह मन्त्र है, तज दे बचन कठोर ॥ १५७ ॥
तू तू कहता तू हुआ, मुझ में रही न हूं ।
जब आपा पर का मिटा, जहां देखूं तहां तूं ॥ १५८ ॥
आयो प्रभु शरणागति, कृपा सिन्धु दयाल ।
एक अक्षर हरि मन बसे, नानक होत निहाल ॥ १५९ ॥

माया सगी न मन सगा, सगा न यह संसार ।
परशुराम या जीव को, सगा सो सिरजनहार ॥ १६० ॥
जननी जने तो भक्त जन कै दाता कै शूर ।
नाहीं तो तू बाँझ रह, काहे गंवावे नूर ॥ १६१ ॥
मैं मैं बड़ी बलाय है, सको तो निकसो भाग ।
कहे कबीर कब लग रहै, रूई लपेटी आग ॥ १६२ ॥
निष्काम बुद्धि विमल हो, कीरति होउ अडिग्ग ।
प्रेम भक्ति हिय दृढ़ बसो, सदा प्रभू हो ढिग्ग ॥ १६३ ॥
पड़ा पपीहा सुरसरी, लगा बधिक का बान ।
मुख मू दे श्रुति गगन में, निकस गये यों प्राण ॥ १६४ ॥
कबीर चकई निस बीसरे, आन मिले प्रभात ।
जो जन बिछुरे राम से, दिवस मिले नहीं रात ॥ १६५ ॥
मकड़ी उतरे तार से, पुन गह चढ़त सुतार ।
जाका जासों मन रम्यो, पहुंचत लगे न बार ॥ १६६ ॥
नीच २ सब तर गये, सन्त चरन लौ लीन ।
जाति के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥ १६७ ॥
कबीर मरत २ जग मुआ, मरन न जाना कोय ।
ऐसी मरनी जो मरे, फेर न मरना होय ॥ १६८ ॥
मर जाऊँ मागूं नहीं, निज स्वारथ के काज ।
परमारथ के कारने, मोहे न आवे लाज ॥ १६९ ॥
सोना काई ना लगे, रूपा घुन नहीं खाय ।
बुरा भला गुरु भक्त जो, कबहुं नरक नहिं जाय ॥ १७० ॥
चोरी हिंसा परत्रिया, निन्दा मिथ्या गाल ।

क्रोध ईर्षा, मान छल, मन बच तन से टाल ॥ १७१ ॥
तृष्णा, चिन्ता दीनता, माया ममता नार ।
ये षट डाकिन पुरुष को, पीवत खून निकार ॥ १७२ ॥
शान्ति दया समता क्षमा, मुदिता विद्या प्रीति ।
ये जननी सम पुरुष की, रक्षा करें सुनीति ॥ १७३ ॥
पतित उधारन भय हरन, हरी नाथ के नाथ ।
नानक ताहि पिछानिये, सदा बसत तुम साथ ॥ १७४ ॥
कबीर जग में वैरी कोउ नहीं, जो मन शीतल होय ।
यह आपा तू डार दे, दया करे सब कोय ॥ १७५ ॥
चिन्ता ताकी कीजिये, जो अनहोनी होय ।
वह मारग संसार को, नानक थिर नहिं कोय ॥ १७६ ॥
मारग चलते जो गिरे, ताको नाहीं दोष ।
कहे कबीर बैठा रहै, ता सिर करड़े कोस ॥ १७७ ॥
पपीहा का प्रण देख के, धीरज रहे न रञ्च ।
मरते दम जल में पड़ा, तोउ न बोरी चुञ्च ॥ १७८ ॥
पतिव्रता पति को भजे, ताहि न और सुहाय ।
सिंह बच्चा जो लंघना, तो भी खास न खाय ॥ १७९ ॥
दास दुखी तो मैं दुखी, आदि अन्त तिहुंकाल ।
पलक एक में प्रगट हो, छिन में करूं निहाल ॥ १८० ॥
यथा अनेकन भेष धरि, नृत्य करे नट कोई ।
सोई भाव दिखावही, आपुन होय न सोई ॥ १८१ ॥
जिनकी आशा करत हैं, स्वर्ग माहि सब देव ।
कबहूं दर्शन पाय हैं, चरण कमल की सेव ॥ १८२ ॥

रहता है सर्वत्र ही, व्यापक एक समान ।
पर निज भक्तों के लिये, छोटा है भगवान् ॥ १८३ ॥
बहुत निबल मिल बल करें, करे जु चाहै सोय ।
तिनकन की रसरी करी, करी निबन्धन होय ॥ १८४ ॥

चौपाई

छोटा बड़ा कहें जो कुछ हम । फबता है सब तुझे महत्तम ॥
गुड़ सा मीठा है भगवान् । बाहर भीतर एक समान ॥
किसका ध्यान करूँ सविवेक । जल तरंग से हैं हम एक ॥

दोहा

भवसागर से तरन का, सीधा यही उपाव ।
महादेव के भजन में, चित्त मगन ह्वे जाव ॥ १ ॥
शङ्कर सिन्धु अगाध में, नाना दृश्य तरंग ।
क्षण भर में होवे उदय क्षण में होवे भंग ॥ २ ॥
दर्पण में भासै जिमि, नगर बहुत बिस्तार ।
शङ्कर में भासै तिमि, अनहोना संसार ॥ ३ ॥
ओत प्रोत शिव सबन में, ज्यों कपड़े में सूत ॥
जो उसको जाने नहीं, सो नर बड़ा कपूत ॥ ४ ॥
जिमि रज्जू अज्ञान से, भासत काल भुजंग ।
जीव हुआ भासै तिमि, आतम देव असंग ॥ ५ ॥
अजर अमर निश्चल अकल, सकल कामना हीन ।
निराकार निर्विकार है, व्यापक इन्द्रि बिहीन ॥ ६ ॥
मैं मेरी जब से मिटी, हटा मोह का फन्द ।

जित देखे उतही दिखे, पूरण परमानन्द ॥ ७ ॥
महादेव अवगुण भवन, विष्णु सकल गुण धाम ।
जेही कर मन रम जाहि सन, नाहि ताहि सन काम ॥ ८ ॥

पद

'प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म' ऐसो ऋगवेद कहे ।
'अहब्रह्म अस्मि' इति, यजुर्वेद यूं कहे ॥
'तत्त्वमसि' इति सामवेद, यूं बखानत है ।
'अयं आत्मा ब्रह्म' कहि, अथर्वण यूं लहे है ॥ १ ॥

सोरठा

कुन्द इन्दु सम देह, उमा रमण करुणा अयन ।
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन ॥ १ ॥
मूक होय वाचाल पंगु, चढ़ गिरवर गहन ।
जासु कृपा सुदायलु, द्रवो सकल कलिमल दहन ॥ २ ॥
बदौं पवन कुमार, खलवन पावक ज्ञान घन ।
जासु हृदय आगार, बसहि राम शर चाप धर ॥ ३ ॥

सवैया

परम पवित्र तुम मित्र हो हमारे ऊधो,
अन्तर विथा की कथा मेरी सुन लीजिये ।
ब्रज की वे बाला जपें मेरी जयमाला,
बढ़ी विरह की ज्वाला तामें तन मन छीजिये ॥
मेरो विश्वास मेरी आश, रस रास मेरी,
मिलवे की प्यास जान सावधान कीजिये ।

प्रीति सूं प्रतीति सूं लिखी है रस रीति सूं,
सो पत्रिका हमारी प्राणप्यारिन कूं दीजिये ॥

कवित्त

दास तो तिहारे जो उदास तो तिहारे,
दूर पास तो तिहारे आमखास तो तिहारे हैं।
दीन तो तिहारे मतिहीन तो तिहारे,
जो नवीन तो तिहारे प्राचीन तो तिहारे हैं ॥
क्रूर तो तिहारे गुण पूर तो तिहारे,
राचे नूर तो तिहारे सांचे सूर तो तिहारे हैं।
भायक तिहारे यस गायक तिहारे,
हो सहायक हमारे हम पायक तिहारे हैं ॥

सवैया

निशि वासर प्रेम के पन्थ चले,
हिय ते हरि नाम बिसारे नहीं।
घटि वृद्धिय देखि के एक घरो,
घरका जिय में कछु धारे नहीं ॥
विधि को विश्वास "ओंकार" कहै,
अपनो बल बुद्धि बिसारे नहीं।
वही मानस की बड़ो किम्मत है,
जो समय पर हिम्मत हारे नहीं ॥

कवित्त

सामिल ह्वै [illegible] में शरीर में न राखे भेद,

अन्तर कपट कछु होत तो उघरि जात ।
ऐसी ठाठ ठाने जाते बिना जन्त्र मन्त्रन ते,
साँपहुं को जहर उतारे तो उतर जात ।
ठाकुर कहत यामें कठिन न मानो कछु,
हिम्मत किये ते कौन काज न सुधर जात ।
चारि जने चार ही दिशा ते चारि कोने गही,
मेरु को हिलायें औ उखारें तो उखर जात ।

सवैया

घूमत द्वार मतङ्ग अनेक,
जंजीर जरे मद अम्बु चुआते ।
तीखे तुरङ्ग मनोगति चञ्चल,
पौन को गौनहुं को जो लजाते ।
भीतर चन्द्रमुखी अवलोकत,
बाहर भूप खरे न समाते ।
ऐसे भये तो कहा "तुलसी" जो,
पै जानकीनाथ के रङ्ग न राते ।

छप्पय

कबहुंक खग मृग मीन, कबहुं मरकट तनु धरके ।
कबहुंक सुर नर असुर, नाग मय आकृति करके ॥
नटवत लख चौरासी, स्वांग धरि धरि मैं आयो ।
हे त्रिभुवन के नाथ, रीझ कर कछू न पायो ॥
जो हो प्रसन्न दो देहु अब, मुक्ति दान मांगूं विहंस ।
जो पै उदास तो कहहु इम, मत धररे नर स्वांग अस ॥

कवित्त

एक स्वांस खाली मत खोय लो खलक बीच,
कोचरु कलङ्क अङ्क धोयले तो धोयले।
उर अन्धियार पाप पुर सों भरयो है तामें,
ज्ञान की चिरागें चित जोयले तो जोयले॥
मिनषा जन्म बार २ न मिलेगो मूढ़,
पूर्ण प्रभु से प्यारो होय ले तो होयले।
देह क्षणभंगुर यामें जन्म सुधारिबो सो,
बीज के झम्मके मोती पोयले तो पोयले॥
द ता हु महीप मानधाता हु दिलीप जैसे,
जाके यश अजहूं लों द्वीप २ छाये हैं।
बली ऐसो बलवान को भयो जहान बिच,
रावण समान को प्रतापी जग जाये हैं॥
बाण की कलान में सुजान द्रोण पारथ से,
जाके गुण दीनदयाल भारत में गाये हैं।
कंसे २ शूर रचे चातुर बिरञ्चजू ने,
फेर चकचूर कर धूर में मिलाये हैं॥ २॥

पद

जिसका कोई न होय हृदय से उसे लगावे,
प्राणीमात्र के लिये प्रेम की ज्योति जगावे।
सब में विभु को व्याप्त जान सबको अपनावे,
है बस ऐसा वही भक्त की पदवी पावे॥ १॥

चोरी हिंसा और व्यभिचार, काया के त्रय दोष विचार।
निन्दा अरु कटुवाद असत्य, वाणी के यह दूषण सत्य॥
तृष्णा द्वेष बुद्धि अरु कोध, त्रिविध प्रकार तू मन को शोध।
इहि प्रकार नव दूषण त्याग कर सत्सग खुलेंगे भाग॥

को याचिये शम्भू तज आन॥ टेक॥

दीनदयाल भक्त आरत हर, सब प्रकार समरथ भगवान॥
दारुण दनुज जगत दुःखदायक, जारयो त्रिपुर एक ही बान॥
काल कूट ज्वर जरत सुरासर, निजपन लाग कियो विषपान॥
सेवत सुलभ उदार कल्पतरु, पारवती पति परम सुजान॥
देहु काम रिपु रामचरण रति, तुलसीदास कहे कृपा निधान॥

टेक शिव शिव रटत मन आनन्द॥

जाके सुमरत विघ्न विनशत, कटत यम को फन्द।
तीन नेत्र विशाल झलकत, तिलक माथे चन्द॥ १॥
ओढ़ना बाघम्बरा शिव, मणत छवि मकरन्द।
भूत प्रेत बिताल जङ्गम, लिये फिरें शिव संग॥ २॥
वृषभ बाहन रुचि धतूरा, भोगता विष भंग।
पारवति पति शरण की गति सूर मन आनन्द॥ ३॥

कवित्त

कोऊ तो कहत ब्रह्म नाभि के कमल मध्य,
कोऊ तो कहत ब्रह्म हृदय में प्रकाश है।
कोऊ तो कहत कण्ठ नासिका के अग्र भाग,
कोऊ तो कहत ब्रह्म भृकुटी में बास है॥

कोऊ तो कहत ब्रह्म दशवें द्वार बिच,
कोऊ तो कहत भंवर गुफा में निवास है।
पिण्ड में ब्रह्माण्ड में निरन्तर विराजे ब्रह्म,
सुन्दर अखण्ड जैसे व्यापक आकाश है॥ १॥

सवैया

काम ही न क्रोध जाके लोभ ही न मोह जाके,
मद ही न मत्सर न कोऊ न विकारी है।
दुःख ही न सुख माने पाप ही न पुण्य जाने,
हर्ष न शोक आने देह ही ते न्यारो है॥
निन्दा न प्रशंसा करै राग ही न द्वेष धरै,
लेन ही न देन जाके, कछु पसारो है।
सुन्दर कहत ताकी अगम अगाध मति,
ऐसो कोऊ साधु सो तो रामजी कूं प्यारो है॥ १॥
प्रथम सुयश लेत शील हू सन्तोष लेत,
क्षमा दया धर्म लेत पाप से डरतु है।
इन्द्रिय कूं घेरो लेत मन ही कूं फेरि लेत,
योगकि युगति लेत ध्यान ही धरतु है॥
गुरु को बचन लेत हरि जी को नाम लेत,
आत्मा को शोधि लेत भवजल तरतु है।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु देत नाहिं,
सन्त जन निशि दिन लेबो ही करतु है॥ २॥
सांचो उपदेश देत भलि २ सीख देत,
समता सुबुद्धि देत कुमति हरतु है।

मारग दिखाय देत भावहुं भगति देत
प्रेम की प्रतीत देत अभरा भरतु है॥
ज्ञान देत ध्यान देत आतम विचार देत,
ब्रह्म कूं बताय देत ब्रह्म में चरतु है।
सुन्दर कहत जग सन्त कछु लेत नाहिं,
सन्त जन निशि दिन देवो हि करत है॥ ३।
मेरी देह मेरा गेह मेरो परिवार सब,
मेरो धनमाल मैं तो बहुविधि भारो हूं।
मेरे सब सेवक हुकम्म कोऊ मेटे नाहीं,
मेरी युवति को मैं ती अधिक पियारो हूं॥
मेरो बन्श ऊंचो मेरे बाबा दादा ऐसे भए,
करत बड़ाई मैं तो जगत उजारो हूं।
सुन्दर कहत मेरो मेरो हो जाने शठ,
ऐसो नहीं जाने मैं तो कालही को चारो हूं॥ ४॥

कवित्त

ब्रह्म तो वही है जौन सच्चिदानन्द घन,
निर्विकार निर्विकल्प नित्य ही प्रकाश है।
माया तो वही है जौन रज तम सत गुण,
धरे नाना नाम रूप जिनके विनाश है॥
ईश्वर तो वही है निज रूप को न भूले कभी,
माया गहे माया सो पृथक उजासे है।
जीव तो वही है जो अविद्या को संयोग पाय,
भूले निज रूप भ्रम फांस ना निकासे है॥ १॥

जाको शुद्ध हियो ताको अनुभव तुम्हारो होत,
नाथ निज तेज ही से मायागुण नासी है।
जगत के व्यापी निज जापी को प्रतापी करो,
नाम रूप आपके अनन्त दिव्य भासी है॥
आपके समान नहीं अधिक कहां ते होय,
अहङ्कार क्षार होत, ध्याये मुदराशी है।
काल त्रास नासी तत्काल कर निहाल देत,
राजे रघुराज जैसे अवध विलासी है॥ २।
आदि है न अन्त है अगम रूप अज महापावन,
प्रसंग औ अलख प्रमाण अप्रमाण है।
एक है प्रकाश है पूरण महाकाश,
विभु निर्गुणनिरञ्जन है चिदानन्द ज्ञान है॥
नित्य है अमर अविनाशी औ अजर सदा,
अव्यक्त निर्विकल्प अरु अवाच्य निर्वान है।
विश्व को कर्तार शब्द ओंकार है वेदरूप
पुराण पुरुष विभु एक भगवान है॥ १।
मोर मुकुट वारो धरे भेष नट वारो,
छोटी लोल लट वारो जगत उजारो है।
सांवरे वर्ण वारो मुरली धरन वानो,
संकट हरन वारो नन्दजू को प्यारो है॥
दानव दलन वारो छवि को छलन वारो,
मटक चलन वारो भृगुलता लक्ष वारो है।
कंस को दलन वारो भृगुलता लक्ष वारो,

मोर पङ्ख वारो रखवारो सो हमारो है ॥ ४ ॥

चेतावनी

जो यह निर्गुण ध्यान नहीं ह्वै,तो सगुण ईश कर मनको थाम ।
सगुण उपासना हूं नहि ह्वै, तो करि निष्काम करम भज राम ॥
जो निष्काम कर्म नहि ह्वै, तो करिये शुभ कर्म सकाम ।
जो सकाम कर्म हूं नहि होवे, तो शठ बार बार मर जाव ॥

दोहे

होतो तो रहतो नहीं, जरतो वाके संग ।
प्रीति पुरानी कारने भस्म भुवावत अंग ॥ १ ॥
होतो तो रहतो नहीं जलतो वाके संग ।
कपट प्रीति के कारने भस्म रमावत अंग ॥ २ ॥

छप्पय

तृण जो दन्त पर धरहि, तिनहि मारत न सबल कोई ।
हम नित्य प्रति तृण चरहि, बैन उच्चरहि दीन हाई ॥
हिन्दूहि मधुर न देहि, कटुक तुरकन पिलावहि ।
पय विशुद्ध अति स्रवहि, बच्छ महिथम्बन जावहि ॥
सुन शाह अक्कबर, अरज यह, करत गो जोरे करन ।
सो कौन चूक मोहि मारियत, मुये चाम सेवहु चरन ॥

कवित्त

गोविन्द के कीये जीव जात हैं रसातल को,
गुरु उपदेश सो तो छूटे जम फन्दते ।
गोविन्द के कीये जीव बश परे करमन के,

गुरु के निवाज सूं ते फिरत स्वच्छन्द ते ॥
गोविन्द के कोपे जीव डूबत भवसागर में,
सुन्दर कहत गुरु काढ़े दुःख द्वन्द ते।
और हूं कहां लोक जू मुख से बनाय कहूं,
गुरु की तो महिमा अधिक गोविन्द ते ॥

छन्द !

राम है मातु पितु सुत बन्धु, वही संगी सखा गुरु राम सनेही।
राम को मोय भरोसो है राम को, रंगी रुच राखो न कोही ॥
जीवत राम है मुये पुन राम, राम सदा रघुनाथ की गति जेही।
सोई जिये जग में तुलसी, न तो डोलत और मुये घर देही ॥

कुण्डलियाँ।

पृथ्वी पवन आकाश है, नीर अग्नि शशि भान।
कपोत गुरु अजगर रूखो, और सिन्धु को जान ॥
और सिन्धु को जान, पतंगी भंवरा कहिये।
माखी हाथी मृग मीन, अरु पिंगला लहिये ॥
चिल्ह बाल कन्या कहूं, तीर बनावहार।
सांप मांकरी भृंग ज्यों, चौबीसों उरधार ॥

कवित्त

मैं तो हूं पतित आप पावन पतित नाथ,
पावन पतित हो तो पातक हरोहिगे।
मैं तो महादीन आप दीनबन्धु दीनानाथ,
दीन बन्धु होतो दया जिय में धरोहिगे ॥

मैं तो हूं गरीब आप तारक गरीबन के,
तारक गरीब हो तो बिरद बरोहिगे।
मेरी करणी पै कछु मुकुर न कीजे कान्ह,
करुणानिधान हो तो करुणा करोहिगे ॥ १ ॥
कैसे तुम गणिका के अवगुण ना गिने नाथ,
कैसे तुम भीलनी के झूठे बेर खाये हो।
कैसे तुम द्वारिका में द्रौपदी की टेर सुनी,
कैसे तुम गज के काज नंगे पग धाये हो ॥
कैसे तुम सुदामा के छिन में दरिद्र हरे,
कैसे तुम उग्रसेन बन्दो ते छुड़ाये हो।
मेरी बेर ऐतो देर कान मूंद रहे नाथ,
दीनबन्धु दीनानाथ काहे को कहाये हो ॥ २ ॥
गिरि को उठाय ब्रज गोप को बचाय लियो,
अनल ते उबारो पुन बालक मंझारी को।
गज की अरज सुन ग्राह ते छुड़ाय लीनो,
राख्यो व्रत नेम धर्म पाण्डवन की नारी को ॥
राख्यो गज घण्ट तले बालक विहंगमको,
राख्यो प्रण भारत में भीष्म ब्रह्मचारी को।
त्रिविध दुखहारी निज सन्तन सुखकारी,
एक मोहे तो भरोसो भारी ऐसे गिरधारी को ॥ ३ ॥
स्वांस के भरोसे गढ़ मांस में निवास कियो,
आशा मन माहीं राखी मानन शरीरांकी।

बड़े २ शूरबीर देख छोड़ गये मूरख,
रही ना निशानो जग शाहां ओ वजीरां की ॥
भज दुःखभञ्जन निरञ्जन को रेरे मूढ़,
नित्य रोज सुघले जो पाहरन में कीरां की ।
कहे कवि धारामल सुमिरन की यही पल,
एक २ घड़ी जात लाख २ हीरां की ॥ ४ ॥

दीनता को त्याग नर अपना स्वरूप देख,
तू तो शुद्ध ब्रह्म अज हृदय को प्रकाशी है ।
अपने अज्ञान तें जगत सब तू ही रचे,
सर्व को संहार करे आप अविनाशी है ॥
मिथ्या प्रपंच देख दुःख निज आन जीये,
देवन को देव तू तो सब सुख राशी है ।
जीव जग ईश होय माया से प्रभावे तू ही,
जैसे रज्जू सांप सीप रूप ह्वै प्रभासी है ॥ ५ ॥

श्याम तन श्याम मन श्याम ही हमारो धन,
आठो याम ऊधो यहाँ श्याम ही सों काम है ।
श्याम होये श्याम जोये श्याम बिन नाहिं तोये,
आंधरे को लकड़ी अधार नाम श्याम है ॥
श्याम गति श्याम रति श्याम ही प्रताप पति,
श्याम सुखदाई से भुलाए घर धाम है ।
तुम भये बौरे ऊधो पातो लाये दौरे दौरे,
योग कहाँ राखें हम रोम रोम श्याम है ॥ ६ ॥

पूरुष रतन गुण गण को सदन पुन,
पौरुष को आय तन परम प्रवीणा है।
सारी धरा को शृंगार जड़ाजड़ को सरदार,
भोग मोक्ष को भण्डार अरु चारू लखि लीना है।
चतुर नदन को चतुर हम चीनो तब,
प्रथम जो ऐसे नर को उतपत कीना है।
ताके पाछे तत्क्षण नष्ट करे हा हा कष्ट,
इति विधि विधिनाको पण्डित न चीना है ॥७॥
दीप में पतग परे जरे न प्रताप जाने,
मीन से अज्ञान भये कुण्डी मिले सांस को।
गज गजी हेत परयो खात २ अंकुश को,
राग में कुरङ्ग राग करे निज नाश को।
पङ्कज की गन्ध बीच नीच भृंग मीच गहे,
इति आदि अज्ञ नाश करें निज स्वांस को।
अहो हा सघन महा मोह को प्रताप लहा,
शुभा शुभ जानो पै न हनो भोग आश को ॥८॥
सोम नाम विप्रवर गिरिजा के वर कर,
लीनो सुधा फल कर दीनो नर नाह के।
भूपति सुपतनी को रानी निज मीत की को,
ताने दोनों गीतकी को न को फल चाह के॥
आगे गणिकी सराये धरापति आगे धरा,
नरनाथ माथ धुना सुन धुना ताहि के।

हा हा कामिनी के हित हते कामिनो के अब,
ताह तजो ताहे भवो शोश शशी जाय के ॥९॥
बन्धन के जाते माते मत्सर कीच बीच,
धरा नाथ मद साथ भरे दरशात हैं।
दूषण चमोरे मोरे भूषण सुभाषण को,
पण्डित भूपाल तो न सुने मेरी बात हैं॥
पुना आन जन्तु जेते दुखी मूढ दीन तेते,
मोते सकुचात हम ओते सकुचात हैं।
पात्र बिना भाषे राखे हवन को राखे तैसे,
जोरणमो गात सो तो बात होत जात हैं ॥१०॥

मवैया

तातका शोच न मात को शोच न शोच भयों मोय अवध तजेको
बनवास लिएको शोच नहीं और शोच नहीं मोहि पिता मरेको
सिया हरेको शोच नहीं और शोच नहीं मोय गृद्ध मरेको।
बालि हतेको शोच नहीं और शोच नहीं मोय लङ्क जरे को॥
लक्ष्मणमूर्छित शोच नहीं और शोच नहीं मोय विपत्ति परे को
शोच तो है इक है तुलसी मोहे भारी विभीषण पैज दिये को॥ १

बातहि से दशरथ मरे अरु बातहि राम फिरे बन जाई।
बातहि से हरिश्चन्द्र सहे दुख बातहि राज दियो मुनिराई॥
रे मन बात विचार सदा कहुं बात की गात में राख सचाई।
बात टीकाने नहीं जिनको तिन बाप ठिकाने न जानहुं भाई॥२
पूरण ब्रह्म लखा जिन केवल एक अखण्ड रमा भवसारे।

रूप न रेख अलेख सदा यम भाषत हैं जिनको श्रुति चारे ॥
ज्ञान दिनेश चढ़ा जिनके मन मोह निशा के मिटे सब तारे ।
सो गुरु हैं हमरे उरमें जिन पाप महानिधि पार उतारे ॥३

एक अखिण्डत ब्रह्म असङ्ग अजन्म अदृश्य अरूप अना मे ।
मूल अज्ञान न शूक्ष्म स्थूल समष्टि न व्यष्टि पन्थ नहीं तामें ॥
ईश न सूत्र विराग न प्राज्ञ तैजस विश्व स्वरूप न जामें ॥
बन्ध न मोक्ष न भोग न योग नहीं कुछ वामेरु है सब वामें ।४

जाग्रत में जो प्रपञ्च प्रभाषत सो सब बुद्धि विलास बन्यो है ।
ज्यों सुपने में ही भोग्य न भोग तऊ एक चित्र विचित्र जन्यो है ॥
लीन सुषुप्ति में मति होतई भेद भगे एक रूप सुन्यो है ।
बुद्धि रच्यो जो मनोरथ मात्र सुनिश्चत बुद्धि प्रकाश बन्यो है॥५

ब्रह्म निरोह निरामय निर्गुण एक निरञ्जन ओर न भाषे ।
ब्रह्म अखण्डित है अध ऊपर बाहर भीतर ब्रह्म प्रकाशे ॥
ब्रह्म ही सूक्ष्म स्थूल जहां लग ब्रह्म हो साहिब ब्रह्म ही दासे ।
सुन्दर और कछू मत जानहुं ब्रह्म ही देखत ब्रह्म तमासे ॥६

सब भाव मिटे तब हीं जब कोविद की नर संगति पावे ।
श्राव्य शारीरिक आदि पढ़े कठ केन कथा मति संग मिलावे ॥
संयम योग समाधि करे यम नेम निरन्तर लक्ष्य बनाये ।
ब्रह्म ही ब्रह्म चहूं दिश देखत या विधिते पद निर्भय पावे ॥७

जो फल थे तन मानव के वह लाभ किये हमने अब सारे ।
आनन्द ब्रह्म सुधानिधि को लख दूर भये भव के भय भारे ॥

भुद नदी सम मेट दियो वपु ब्रह्म पयोनिधि माँहि पधारे ।
प्रत्येक रूप भई ममता यह पुत्र बधु अब नाँहि हमारे ॥८

सुतके हित प्यार करे जगमें कहा कौन करे धनके हित प्यारा ।
हित नार न प्यार करे जगमें इमि ढूंढ लिया हमने भवसारा ॥
हित आतम प्यार करें सब ही यह आतम है सबके अति प्यारा ।
वह आनन्दरूप पयोनिधि है उसके बिन अरी नहीं कोउ प्यारा ॥९

वसु पूरण हो वसुधा सगरी पुन और पदार्थ हों सुखकारी ।
गज गामिनि भामिनी हो मधुरी मुखकी छबि चन्द्रकला जिन टारी
शुभ व्यञ्जन होंहि अहार घने जिनके रसते तनु पुष्टि अपारी ।
सुख आतम नाँहि लहे जबहीं तब होंहि हलाहलके समचारी ॥१०

वह आनन्द नाह मिले धनसे और नाह मिले वह त्याग कमाये ।
तन तीरथ त्याग करे न मिले न मिले हरि के पुर देह तपाये ॥
घन कानन घोर निवास करे अथवा गिरिकन्दर माँहि बसाये ।
रति आतम एक सुधा घन है पर जो रति नाह सुनाह सताये ॥११

जिनको नित मैं चितमों चिजवौ छिनकी न तोर माहि रतीना ।
वह आन पुमान की सङ्ग रति पुनिता मनमें गणिका गृह कीना ।
धिक है अबला, भूत कन्दर्प अरु मोहिधिकार जो मार अधीना ।
इति रीति समूह की प्रीति [illegible] नृप होय योगीश्वर ईश्वर चीना
ये सति ज्ञान सुजानन के अभिमान मदादि विकार निवारे ।
केचित् मौसम नीचन के चित्त में बहुमान मदादिक धारे ॥
धून्व यथा मठ साधुन को अति मोक्ष को साधन दोष हमारे ।

सो हम से मदनातुर श्रो अति काम को कारण वाम समारे ॥१३

कवित्त

बन में रहत नित शिवरी कहत सब,
चहत टहल साधु तन न्यूनताई है।
रजनी के शेष ऋषि आश्रम प्रवेश करी
लकरीन बौझ धरी आवे मनभाई है॥
न्याइवे को मग झारो कांकरिन बोनडारी,
वेगि उठ जाय नेकु जाति न लखाई है।
उठत सवार कहें कौन धौं बुहारि गयो,
भयो हिये सोच कोऊ बड़ो सुखदाई है॥१॥
बड़े ही प्रसङ्ग ये मतंग रसरंग भरे,
धरे देखि बोझ कह्यो कौन चोर आयो है।
करे नित चोरी अहो गहो वाहि एक दिन,
बिना पाये प्रीति वाको मन भरमायो है॥
बैठे निशि चौकी देत शिष्य सब सावधान,
आय गई गहि लई कांपे तन नायो है।
देखतहि ऋषि जल धारा चली नैनन ते,
बैनन सों कह्यो जात कहा कछु पायो है॥२॥
दीठिहू न सोंही होत मानि तन गोत छोत,
परी जाय सोच सोत कैसे कै निकारिये।
भक्ति को प्रताप ऋषि जानत निपट नीके,

केऊ कोटि विप्रयाई यापै बारि डारिये ॥
दियो वास आश्रम में श्रवण में नाम दियो,
कियो मुनि रोष सेवा कीनी पाति न्यारिये।
शिवरी सों कह्यो तुम राम दरशन करो,
मैं तो परलोक जात आज्ञा प्रभु पारिये ॥३॥

गुरु के वियोग हिये दारुण ले शोग दिये,
जियो नाहि जात तोपै राम आस लागी है।
न्हायवे के घाट निशि जात ही बुहार सब,
भई यों अबार ऋषि देखि व्यथा पागी है॥
छ्यो गयो नेकु बहु खीझत अनेक भांति,
करिकं विवेक गयो न्हान यह भागी है।
जलसों रुधिर भयो नाना कृमि भरि गयो,
नयो पाय शोच तऊ आने न अभागी है ॥४॥

ल्यावे बन बेर लागी राम की औ सेर फल,
चाखे धरि राखे फेरि मीठे उन्हीं योग है।
मारग में रहे जाइ लोचन बिछाय कभू,
आवें रघुराई दृग पावें निज भोग है॥
ऐसे ही बहुत दिन बीते मग जोवतहि,
आय गये शौचकहि मिटे सब शोग हैं।
जोपै तन न्यूनताई आई सुधि छोपि जाई,
[illegible] ले आप स्योरि कहाँ ठाढ़े और लोग हैं॥५॥

पूंछि २ आये तहाँ शिवरी स्थान जहाँ,
कहां वह भागवती देखों दृग प्यासे हैं।
आय गई आश्रम में जानी कै पधारे आप,
दूरिहि ते साष्टांग करी चक्षु भासे हैं॥
हबकि उठाय लई व्यथा तन दूरि गई,
नई नीर भरी नयन परे प्रेम प्यासे हैं।
बैठे सुख पाय फल खाय के सरायवेई,
कह्यो कहा कहों मेरे मग दुःख नासे हैं। ६॥
करत हैं शोच सब बैठे ऋषि आश्रम,
जलको बिगार सो सुधार कैसे कीजिवे।
आवत सुने हैं बन पर रघुनाथ कहूं,
आवें जब याको भेद भले कह दीजिये॥
इतने ही मांझ मुनि स्यौरी के विराज आनि,
गयो अभिमान चलो पग गहि लीजिये।
आय खुनसाय कहि नीर को उपाय कहो,
गहो पग भीलनि के स्वच्छ तन भीजिये॥७॥
रतन अपार सार सागर उधार किये,
लिए हित चाय के बनाय माला करी है।
सब सुख साज रघुनाथ महाराज जू को,
भक्त सों बिभीषण जू आनि भेंट धरी है॥
सभा ही की चाह अवगाह हनुमान गरे,
डारि दई सुधि भई मति अरबरी है।

राम बिन काम कौन फेरि मनो दोने डारि,
खोलि त्वचा नामहिं दिखायो बुद्धि हरी है ॥८॥

छप्पय

जय जय मोन बराह कमठ नर हरि बलि बामन।
परशुराम रघुवीर कृष्ण कीरति जग पावन॥
बुद्ध कलङ्की व्यास पृथू हरि हंस मन्वतर।
यज्ञ ऋषभ हयग्रीव ध्रुव वरदेन धन्वतर॥
बदरीपति दत्त कपिलदेव सनकादिक करुणा करो।
चौबीस रूप लीला रुचिर अग्रदास उर पद धरो॥
विधि नारद शंकर सनकादिक कपिल देव मनुभूप।
नर हरिदास जनक भीष्मबलिशुक मुनि धर्म स्वरूप॥
अन्तरङ्ग अनुचर हरजू के जो इनको यश गावे।
आदि अन्तलों मंगल तिनके श्रोता वक्ता पावे॥
अजामील प्रसंग यह निर्णय परमधर्म को जान।
इनकी कृपा और पुनि समझे द्वादश भक्त प्रधान॥

कवित्त

न्हाता ही विदुर नारि अङ्गनि प्रक्षाल करि,
आये गण द्वार कृष्ण बोलिकै सुनायो है।
सुनत हि सुर सुधि डारलै निडर मानो,
राख्यो मद भरि दौरि आनिकै चितायो है॥
डारि दियो पीतपट कटि लपटाय लियो,

हिये सकुचायो वेष वेग ही बनायो है ॥
बैठी डिग आय केरा छोलि छिलका खबाइ,
आयो पति खोज्यो दुःख कोटि गुनो पायो है ॥१॥
प्रेम को विचारि आप लागे फलसार देन,
चैन पायो हिये नारी बड़ी दु.खदाई है।
बोले रीझि श्याम तुम कौन बड़ो काम तो पै,
स्वाद अभिराम कैसो बक्स मैं न पाई है ॥
तिया सकुचाई कर काटि डारों हाय प्राण,
प्यारे को खवाय छोलि छिलका निभाई है।
हित हो को बात दोऊ कोऊ पार पावै नाहिं,
नीके ले लड़ावै सोई जाने यह गाई है ॥ २ ॥
कुंती करतूति कैसे करै कौन भूत प्राणी,
माँगत विपत्ति जासों भाजें सब जन हैं।
देख्यो मुख चाहौं लाल देखे बिन हिये साल,
हूजिये कृपालु नहिं दोजै बास बन है ॥
देख बिकलाई प्रभु आँख भरि आई फिरि,
घरहि को ल्याई कृष्ण प्राण तन धन है।
श्रवण वियोग सुनि तनक न गयो भयो,
वपु न्यारो अहो एही साँचोपन है ॥

शब्द १

मन परदेशी हो ये नहीं अपना देश ॥ टेक ॥
सत् का कहना सत् में रहना, आनन्दरूप किसी का भयना।
जो कोई कहै सभी को सहना, वे ही रटन हमेश ॥ १ ॥

गुरु का वचन सत्य कर मानो, जगत् जाल झूठा कर जानो।
तत्त्वमसि का रूप पिछानो, कट जाँय करम कलेश ॥ २ ॥
जो दीखे सो रूप हमारा, कोई नहीं है हमसे न्यारा।
मित्र और शत्रु कोई न हमारा, मिट गये राग द्वेष ॥ ३ ॥
शाह गुरु शुकदेव बिराजे, चरणदास चरणों में साजे।
गुरु के बचन कभी नहीं त्यागे यही सत्य उपदेश ॥ ४ ॥

२

अब मैं अपने राम को रिझाऊं ॥ टेक ॥
डार पात के हाथ न लाऊं, ना कोई वृक्ष सताऊं।
पात पात में साहिब मेरा, झुक कर शीश नवाऊं ॥ १ ॥
गङ्गा जाऊं न यमुना जाऊं, ना कोई तीरथ न्हाऊं।
अठसठ तीरथ हैं घट भीतर, वाही में मल २ न्हाऊं ॥ २ ॥
औषधि लाऊं न बूटी लाऊं, ना कोई वैद्य बुलाऊं।
पूरण वैद्य मिले अविवाशी, उनको ही नजब दिखाऊं ॥ ३ ॥
ज्ञान कुठारा कस कर बांधूं, सुरति कमान चढ़ाऊं।
पांच चोर हैं या घट भीतर, उनको मार गिराऊं ॥ ४ ॥
योगी हूं ना जटा बढ़ाऊं, ना मैं अंग विभूत रमाऊं।
बिस रंग रंगे आप विधाता, वाही में आनन्द मनाऊं ॥ ५ ॥

३

इतना तो करना स्वामी जब प्राण तन से निकले,
गोविन्द नाम कह कर, मेरे प्राण तन से निकले ॥ टेक ॥
श्री गंगाजी का तट हो, या यमुना जी का बट हो।

और सांवरा निकट हो, फिर प्राण तन से निकले ॥ १ ॥
श्रीवृन्दाबन का स्थल हो, मेरे मुख में तुलसी दल हो ।
विष्णु चरण का जल हो, फिर प्राण तन से निकले ॥ २ ॥
सन्मुख सांवरा खड़ा हो, बन्शी का सुर भरा हो ।
तिरछा चरण धरा हो, फिर प्राण तन से निकले ॥ ३ ॥
शिर सोहना मुकुट हो, मुखडे पं कालो लट हो ।
यही ध्यान मेरे घट हो, फिर प्राण तन से निकले ॥ ४ ॥
उस वक्त जल्दी आना, ना कौल भूल जाना ।
नूपुर की धुनि सुनाना फिर प्राण तन से निकले ॥ ५ ॥
मेरे प्राण निकलें सुख से तेरा नाम निकले मुख से ।
बच जाऊं घोर दुःख से, फिर प्राण तन से निकले ॥ ६ ॥
जब कण्ठ प्राण आवे, कोई रोग ना सतावे ।
तू दर्श यदि दिखावे, फिर प्राण तन से निकले ॥ ७ ॥
यह नेकसी अरज है, मानो तो क्या हरज है ।
कुछ तेरा भी फरज है, फिर प्राण तन से निकले ॥ ८ ॥

४

हमारे प्रभु अवगुण चित ना धरो ॥ टेक ॥
समदर्शी है नाम तुम्हारो, चाहे तो पार करो ॥
इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरो ।
जबमिल गयो तब एक रूप भयो, गंगा नाम परो ॥
एक लोहा पूजा में राखो, एक घर बधिक परो ।
ऊंच नीच पारस नहीं जाने, कंचन करत खरो ॥

अब को बेर मोहि नाथ उबारो, नहिं प्रण जात टरो।
यह माया भ्रमजाल निवारो, सूरदास सगरो॥

५

दीनानाथ दयानिधि स्वामी, कौन भांति मैं तुम्हें रिझाऊं ॥टेक॥
श्रीगंगा चरणों से निकसी, सूचो नीर कहां से प्रभु लाऊं॥
काम धेनु कल्पवृक्ष तुम्हारे कौनसो पदार्थ भोग लगाऊं॥
चार वेद तुम मुख से भाषे, और कहा प्रभु पाठ सुनाऊं॥
अनहद बाजे बजत तुम्हारे ताल मृदंग क्या शंख बजाऊं॥
कोटि भानु थारे नखको शोभा दीपकले प्रभु कहा दिखाऊं॥
लक्ष्मी थारो चरणन की चेरी, कौन द्रव्य प्रभु भेट चढ़ाऊं॥
तुम तिरलोकी के कर्त्ता हर्त्ता, तुम्हें छोड़ प्रभु कौन पै जाऊं॥
सूर श्याम प्रभु विपत्त विडारन मन वांछित फल तुमहि से पाऊं॥

६

हमारे प्रभु एक तुम हो ओंकार ॥ टेक ॥
मात पिता गुरु बन्धु सहोदर, धन विद्या परिवार॥
मन बल बुद्धि प्राण तुम हो हो नयनन में उजियार।
हरि होकर हरे रंग में दीसो, पत्र पुष्प फल डार॥ १॥
धरणी आकाश शशी अरु तारे, बिजली में चमकार।
ऊपर नीचे पर्वत सागर, सब तुम अपरम्पार॥ २॥
तुम हो सूरज में हो गरजो, बरसो अमृत धार।
एक धुनी हो तुम से सब की तुमरा वार न पार॥ ३॥
सुन्दर शक्ति विकाश शुद्धता, हमको दे दातार।

काम क्रोध मद लोभ निवारो, परमानन्द दो प्यार ॥ ४ ॥

७

लज्जा मेरी राखो ना श्याम हरी ॥ टेक ॥
कीनी कठिन दुशासन मो से गह केसो पकड़ी ॥
आगे सभा दुष्ट दुर्योधन, चाहत नगन करी ।
पांचों पण्डव सभी बल हारे, इन से कछू ना सरी ॥ १ ॥
भीष्म द्रोण विदुर भवे विस्मय, इन सब मौन धरी ।
अब नहीं मातु पिता सुत बान्धव, एक टेक तुम्हरी ॥ २ ॥
बसन प्रवाह दिये करुणानिधि, सेना हार परी ।
सूरदास जब सिंह शरण जई, स्यारों की क्या है डरी ॥ ३ ॥

८

किन बेरो गोबिन्द नाम धरो ॥ टेक ॥
लेन देन के तुम हितकारो, मोते कछु ना सरो ॥ १ ॥
विप्र सुदामा कियो अयाचक, तन्दुल भेट धरो ॥ २ ॥
द्रुपदसुता की तुम पति राखी, अम्बर दान करो ॥ ३ ॥
सन्दीपन के तुम सुत लाये, विद्या पाठ पढ़ी ॥ ४ ॥
सूर की बिरियां निठुर होये बैठे कानन मूंद धरो ॥ ५ ॥

९

अरे मन तू गोबिन्द के गुन गाना रे ॥ टेक ॥
नाहक चिन्ता करता डोले, जो पाना सो खानारे ॥ १ ॥
झूंठो धाम झूठी है दौलत, काहे चित्त फंसानारे ॥ २ ॥
अन्त समय कोई काम न आवे. हाथ पसारे जानारे ॥ ३ ।

कोटि वतन चाहे करले मूरख, पच २ कर मरजाना रे ॥ ४ ॥
जो ललाट लिखा सोई मिलि है, अधिक ना मिले दाना रे ॥ ५ ॥
काम क्रोध का पहिन चोलना, काहे को इतराना रे ॥ ६ ॥
राधा माधव हित सों भजले, बाते हो कल्याना रे ॥ ७ ॥

१०

जगदीश्वर तुम्हारा सहारा हमें, वहां दीखे न कोई हमारा हमें ॥
गर्भ यातना के संकट से, करके कृपा जो उबारा हमें ॥ १ ॥
दांत नहीं थे जब दूध दियो तब, फिरभी कभी न बिसारा हमें ॥
सदा रहो साथी घट भीतर, पलभर भी करते न न्यारा हमें ॥
जो कुछ सुख तुम देहु दयाकर क्या कोई देगा विचारा हमें ॥
धर्मदास कहे भव वारिधि से, पार कबीर उतारा हमें ॥

११

आलम में किस का डर है जिस पर नजर हो तेरी ।
बेशक वह बेखतर है जिस पर मेहर हो तेरी ॥
दुशमन न कोई उसका, होवे, तू दोस्त जिसका ।
दुनियाँ ही पार होवे, हाँ जब मदद हो तेरी ॥
दरदो अमल जहाँ के, ऐबो गुनाह जहाँ के ।
कोई न पास आवें, जिसको पनाह हो तेरी ॥
राई से कोइ कर दे, खाली को दम में भर दे ।
थोड़े से तू बहुत दे, पर जब रजा हो तेरी ॥

१२

कछु लेना ना देना मगन रहना ॥ टेक ॥
पांच तत्त्व का बना पींजरा, जामें बोले मेरो मैना ॥ १ ॥
तेरो पिया तेरे घट में बसत है, सखो खोल कर देखो नैना ॥ २॥
गहरी नदिया नाव पुरानी, खेवटिया से मिले रहना ॥ ३ ॥
कहें कबीर सुनो भाई साधो, गुरु के चरण में लिपट रहना ॥४॥

१३

सच्चा सतगुरु मिले तो चेला, पलट के कीड़े से भृङ्ग होकर।
समाया अपने में आप फिर मैं, मिसाले जलकी तरंग होकर॥
इड़ा पिंगला सुषुम्ना, तीनों नाड़ी के संग होकर।
हमेशा बहतो है यह त्रिवेणी, हमारी भृकुटी में गंग होकर॥
यह दिल को धोया मैं खूब मल मल मिसाले दर्पण के रंग होकर।
दुई दूर कर हुआ मैं इकता, दुरङ्ग से फिर इकरंग होकर॥
रूप सच्चिदानन्द है मेरा, कहां जहां से सोऽहं होकर।
दिल कायर के कतर लिये पर हुआ वह बेपर अपंग होकर॥
क्या मजाल है उड़ान भरले, हमारा दिल ये मतंग होकर।
ज्ञान का अंकुश लगाया हमने, हमेशा सन्तों के संग होकर।
बिन सत्संगति कोई न सुधरे, कुसंग छोड़ा सुसंग होकर॥
नाभि कमल से गया मैं सीधा, बंक नाल की सुरंग होकर।
शून्य शिखर में सोया मैं सुख से, जन्म मरण से निसंग होकर॥
क्या मजाल है वहां काल की, जो देखे मुझे बदरंग होकर।
योगी जुगत जीवें हमेशा, युगान युग उस प्रसंग होकर॥

सूरजगिरि कहें सन्यासो से अड़े कोई फुकरा मलंग होकर॥
तो खूब ठहरे बराबरी का सभा में शब्दों से जग होकर।
संसारी नहीं अड़े सन्त से, अड़ काई मंग निहंग होकर॥
आखिर को फिर जले ज्ञान बिन, मिसाले दीपक पतंग होकर।
कवितागिरि कहें कविताई को, ढंग से मथ कर कुढंग होकर॥

१४

मैं वारि जाऊं सत्गुरु की, मेरो कियो भरम सब दूर॥ टेक॥
प्यालो प्यायो प्रेम को, घोर सजीवन मूर।
चढ़ी खुमारी नाम की, होगई, चकना चूर॥ १॥
बिमल प्रकाश अकाश में, लख्यो बिना शशि सूर।
मगन भयो मन गगन में, सुनकर अनरद तूर॥ २॥
ममता घट समता बढ़ी, उर अन्तर भरपूर।
राग द्वेष जग से मिटो, अब मन भयो मजूर॥ ३॥
शब्द सुनत यमदूत के मुख में लागो धूर।
आय मिले धर्मदास को, सत्गुरु हाल हजूर॥ ४॥

१५

हमारे गुरु ने दीनी है ज्ञान जड़ी॥ टेक॥
यह तो जड़ी मोय प्यारी लागे, अमृत रस की भरी॥ १॥
काया नगर में अघर एक बंगला, वा में गुप्त धरी॥ २॥
पांच नाग पच्चीस नागिनी, सूंघत तुरत मरी॥ ३॥
इस काली ने सब जग खाया, सत्गुरु देख डरी॥ ४॥
कहे कबीर सुनो भाई साधो, ले परिवार तरी॥ ५॥

१६

सखी मेरे जगे पूर्वले भाग, आज गुरु दर्श दिखाय दियोरी ॥टेक॥
सब से तोड़ एक संगी, जोड़ी, हमारी अटल धुनी रही लाग।
जब सत्गुरु मेरे अगना में आये हमारे भरम भूत गये भाग॥
घर अगना परिवार डगर में, हमारो अभय नगारो रह्यो बाज॥
प्रेम पिया संग हिलमिल राची, मैंने नेक न मानी लाज॥
कहें कबीर सुनो भाई साधो, मुझे सुख का दिया सुहाग॥

१७

कोई करो मित्रता मीत प्रीत की रीत निराली है॥ टेक॥
जल से दूध ने मेल किया था, निज गुण अपना रूप दिया था।
वह कर लिया आप समान, दुई सब दूर निकाली है॥ १॥
देख अग्नि पर दूध का तपना, जलने अंग जला दिया अपना।
नहीं जलने दिया यार, तप्त सब आप उठाली है॥ २॥
दूध उफन कर गिरा अग्न में, समझा यार जल गया लग्न में।
फिर जल के छींटे पाय, शोक तजि शीतलता लई है॥ ३॥
यों तो सहज है दिलका लगाना, मगर कठिन है ओड़ निभाना।
टेकचन्द कर ख्याल कि वो तो, तेरा ख्याली है॥॥ ४॥

१८

ऊधो कर्मन की गति न्यारी॥ टेक॥
सब नदियां जल भर भर रहियां सागर किस विध खारी॥
उज्जल पङ्ख दिये बुगला को कोयल किस गुण कारी॥
सुन्दर नयन मृगा को दीने बन बन फिरत उजारी॥

मूरख मूरख राजे कीने पण्डित फिरें भिखारी ॥
सूर श्याम मिलिवे की आशा छिन छिन बीतत भारी ॥

१९

सब दिन होत न एक समान ॥ टेक ॥
इक दिन राजा हरिश्चन्द्र गृह सपति मेरु समान।
इक दिन जाय श्वपच गृह सेवत अम्बर हरत मशान ॥
इक दिन दूलह बनत बराती चहुंदिशि ढुरत निशान।
इक दिन डेरा होत जंगल में कर सूधे पग तान ॥
इक दिन सीता रुदन करत है महा विपिन उद्यान।
इक दिन रामचन्द्र मिल दोऊ विचरत पुष्प विमान ॥
इक दिन राजा राज युधिष्ठिर अनुचर श्रीभगवान।
इक दिन द्रौपदी नग्न होत है चीर दुशासन तान ॥
प्रगटति है पूरब को करनी तज मन शोच अजान।
सूरदास गुण कहां लग वरनों विधि के अङ्क प्रमान ॥

२०

क्यों सोया गफलत का मारा जाग रे नर जाग रे।
या जागै कोई योगी भोगी या जागै कोई चोर रे ॥
या जागै कोई सन्त पियारा लगी राम से डोर रे।
ऐसी जागन जाग पियारे जैसो ध्रुव प्रहलाद रे ॥
ध्रुव को दीनो अटल पदवी दिया प्रहलाद को राज रे।
हरि सुमरे सोई हंस कहावे कामी क्रोधी काग रे ॥
तन का चोला भया पुराना, लगा दाग पर दाग रे।

मन है मुसाफिर तनु की सराय विच क्यों कीना अनुराग रे॥
साधु सन्त सत्गुरु की सेवा पावै अचल सुहाग रे।
नितानन्द भज राम गुमानी जागन पूरन भाग रे॥

२१

बन्म तेरो बातों में बीत गयो तैंने कबहुं न कृष्ण कह्यो॥
पांच बरस का आला भोला अब तो बीस भयो॥
मकर पचासो माया कारण देश विदेश गयो॥
तीस बरस की अब मति उपजी लोभ बढे नित नयो नयो॥
माया जोड़ी लाख करोड़ी अजहुं न तृप्त भयो॥
वृद्ध भये जब आलस उपज्यो जप तप कण्ठ रह्यो॥
साधु की संगति कबहुं न कीनो विरथा जन्म गयो॥
यह संसार मतलब का लोभी झूठा ठाठ ठयो॥
कहत कबीर समझ मन मूरख तू क्यों भूल गयो॥

२२

आऊँगा न जाऊँगा मरूँगा न जीऊँगा।
गुरु के शब्द से मैं अमीरस पीऊँगा॥
कोई पूजे मढिया कोई पूजे गौरां।
दोनों की मति हड़ ले गया चोरा॥
कोई जावे मक्का कोई जावे काशी।
दोनों के गले विच पड़ गई फांसी॥
कोई फेरे माला कोई फेरे तसबी।
देखारे लागा यह दोनों को कसबी॥

कहैं कबीर सुनो नर लोई।
हम ना किसी के हमारा ना कोई॥

२३

चार वर्ण में सोई बड़ा जिन राधा कृष्ण रटा रटा॥
काहे को जोड़े माल खजाने काहे को चुनावत ऊँचो अटा॥
जब यम की तलबी आवेगी छाँड़ जाय सब लटा पटा॥
यह दम हीरा लाल अमोलक पल में जाता घटा घटा॥
वहां आया तू कौल करार कर यहां फिरता तू नटा नटा॥
अपने कुटुम्ब को ऐसे देखें पलक उठाये पटा पटा॥
जब यह हंसा चल्यो जात है छोड़ जाय तू रटा रटा॥
यह संसार मतलब का गरजी बातां करता झूठ मिठा॥
चन्द्र सखी भज बालकृष्ण छबि कानन कुण्डल मुकुट जड़ा॥

२४

तुम देखो सन्तो भूल भुलैयां का तमाशा॥ टेक॥
ना कोई आवा ना कोई जाता, झूठ जगत् का नाता।
ना काहू की बहन भानजी, ना काहू की माता॥
ड्योढी तक तेरी तिरिया जावे, पोली लग तेरी माता।
मरघट तक सब जांय बराती, हंस अकेला जाता॥
एकतई ओढ़े दोतई ओढ़े, ओढ़े मलमल खासा।
शाल दुशाला नित की ओढे, अन्त खाक मिल जाता॥
कोड़ी कोड़ी माया जोड़ी जोड़े लाख पचासा।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सग चले ना माशा॥

२५

देश मेरा बाँका है भाई जहां हंस अमर हो जाई ॥ टेक ॥
देश मेरे की अद्भुत लीला वाको थाह न पाई ।
शेश महेश गणेश थके हैं शारद मति भरमाई ॥
चांद सूरज अग्नि तारों की जोति जहां मुरझाई ।
अर्ब खर्ब बिजली जहां चमके तिनको छवि शरमाई ॥
देश मेरे को कठिन पन्थ है तुम से चला न जाई ॥
सन्त रूप धरके जाना हो नातर काल ले खाई ॥
परधन मिट्टी के सम जानो माता नार पराई ।
राग द्वेष की होली फूंको तज दो मान बड़ाई ॥
सत्गुरु की नित्य शरण गहोरे चरणों में चित लाई ।
नाम रूप मिथ्या जग त्यागो तब वहां पहुंचो जाई ॥
घाटी विकट निकट दरवाजा सत्गुरु राह बताई ।
बिन सत्गुरु वाकी राह न पावे लाख करो चतुराई ।
गुरु अपने को शीश नवाऊं आतम रूप लखाई ।
निर्भयानन्द हैं गुरु हमारे संशय दिये मिटाई ॥

२६

मन हरदम हरि भज मुख से सीताराम राम बोल ।
सीता राम राम बोल चाहे राधे श्याम बोल ॥
है सार जगत में राम नाम का अन्त कहूं मत डोल ।
तज कपट दम्भ पाखण्ड ध्यान धर दिलकी घुण्डी खोल ॥ १ ॥
है झूठे मित्र कुटुम्ब कुधातु पर ज्यों सोने का झोल ।
तन मृतक भये सब तजें प्राण घटे उठे न कौड़ी मोल ॥ २ ॥

था गर्भवास में किया भजन करने का हरि से कौल।
यहां आय फँसा माया में काल का बज रहा सर पर ढोल ॥३॥
सच्चा हीरा तन पाय वृथा मत पत्थर धूल टटोल।
हरसहाय मूढ भज कृष्ण विषय विष मत ना पीवै घोल ॥ ४ ॥

२७

गुरु के समान नहीं दूसरा जहान में ॥ टेक ॥
गुरु ब्रह्मरूप जानो शिव का स्वरूप जानो।
साक्षात् विष्णु जानो लिखा है पुरान में ॥ १ ॥
गुरु ज्ञान बतावे गुरु पाप से बचावे।
ब्रह्म से मिलावे गुरु तुर्या पद ध्यान में ॥ २ ॥
यहीं श्रुति वेद कहता गुरु बिन ज्ञान कैसा।
ज्ञान बिना मुक्ति कैसी आवे तेरे ध्यान में ॥ ३ ॥
छल कपट त्याग दीजो गुरु जी की सेवा कीजो।
सांवरा की शरणा लीजो खेलो ना मैदान में ॥४॥

२८

अखियाँ गुरु दर्शन की प्यासी ॥ टेक ॥
देखन चाहें कमल नयन को हरदम रहत उदासी ॥ १ ॥
केशर तिलक माल मोतियन की वृन्दावन के वासी ॥ २ ॥
जो तन लागे वोही तन जाने लोगन के मुख हांसी ॥ ३ ॥
नेह लगाय त्याग दई तृण सम डाल गये गल फांसी ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो लूंगो करवत काशी ॥ ५ ॥

२९

अखिया मोहन की बिन देखे रहा न जाय ॥ टेक ॥
जिन नैनन में श्याम बसत हैं दूजा नाहिं सुहाय ॥ १ ॥
कारज रेख किरकरा लागे सुरमा नाहिं ठहराय ॥ २ ॥
मेरे अंगना में आय के मटकी लेत उठाय ॥ ३ ॥
और के डरते डरपत नाहिं जसुधा देख डराय ॥ ४ ॥
बंशी वाले मोहना बशी नेक बजाय ॥ ५ ॥
तेरी बंशी ने मेरो मन हरो घर अङ्गना न सुहाय ॥ ६ ॥
सूरदास प्रभु तुमसे मिलन को हर से हेत लगाय ॥ ७ ॥

३०

तेरा पिञ्जरा बना है अमोल निरख पिञ्जरे ने भाई ॥ टेक ॥
इस पिञ्जरे में तोता मैना ओऽहं सोऽहं बोलत बैना ।
सुरत निरत को डाट शब्द में चितलाई ॥ १ ॥
पांचों मार पचीसों बश में इन पांचों को करले रस में ।
शून्य शिखर को खोज भरम तेरा मिट जाई ॥२॥
खम्ब गड़े हैं बड़े रसीले बन्ध मत समझो इनको ढीले ।
गला पवन को गांठ खम्ब में उलझाई ॥ ३ ॥
जो सतगुरु की शरणा आवे मङ्गल मूल परम पद पावे ।
हो तुर्या असवार मिटे आवा जाई ॥ ४ ॥

३१

दोहा—तू ही मात तू ही तात है, तूही बन्धु सुत नार ।
तू ही आदि तू ही अन्त है, तूही गुरु दातार ॥

तेरा यह खेल अपारा है जित देखूं तितनू हो तू है ॥ टेक ॥
तूही बन में तूही घर मन्दिर में कूप बावड़ो तूही सरवर में।
तूही सब का करतार भरम से न्यारा है ॥ १ ॥
इन्द्रियों में देखा तू मन है शुद्ध करण में तू ही पवन है।
वरणों में तू ही वरण जलों में गंगा धारा है ॥२॥
ज्ञानी में ब्रह्मज्ञान तू ही है योगी का मुख ध्यान तू ही है।
सबका जीवन प्राण तू हो आधार है ॥ ३ ॥
फूल पात फल डाल तू ही है योगी का मुख ध्यान तू ही है।
परमानन्द प्रकाश शब्द ओंकारा है ॥ ४ ॥

३२

जगत् में हरि सम मित्र न कोई ॥ टेक ॥
भाँति २ के देत पदारथ कृपा नीर से धोई ॥ १ ॥
जो नर हरि सों करे मित्रता आप हरि सम होई ॥ २ ॥
हरि सुमिरण सत्सङ्ग जगत् में सार पदारथ दोई ॥ ३ ॥
भजो कन्हैयालाल हरि को वृथा जन्म मत खोई ॥ ४ ॥

३३

कोई पहुंचे सन्त विवेकी उस मग की राह कठिन है ॥ टेक ॥
बिना पन्थ बिन पग का मारग कोई पहुंचे बिरला जन है ॥ १ ॥
शून्य शिखर पर चढ़कर देखा जहाँ बिना नयन दर्शन है ॥ २ ॥
बिना धरण जहाँ आसन मारो बिना देह इक जन है ॥ ३ ॥
मगन भई जब पिय को पायो उस पीव पर मेरा मन है ॥ ४ ॥
मङ्गलानन्द मगन सुखराशी सत् चित् आनन्द घन है ॥ ५ ॥

३४

चले गये दिल के दामन गीर ॥ टेक ॥
सब सुध आवे तुम्हरे दर्श की उठें कलेजे पार ॥ १ ॥
नटवर भेष नयन रतनारे सुन्दर श्याम शरीर ॥ २ ॥
वृन्दावन बंशीबट त्यागो निर्मल यमुना नीर ॥ ३ ॥
आप ही जाय द्वारिका छाये खारी नद के तीर ॥ ४ ॥
सब गोपियन को नेह बिसारो ऐसे भये बे पीर ॥ ५ ॥
सूरदास ललिता उठ बोली आखिर जाति अहीर ॥ ६ ॥

३५

बा घर जाइयो हे नींद जा घर राम नाम नहीं भावे ॥ टेक ॥
बैठ सभा में मिथ्या बोले निन्दा करे पराई ।
वह घर हमने तुझे बताया जय्यो बिना बुलाई ॥ १ ॥
के तू जय्यो राज दुवारे के रसिया रस भोगो ।
हमरा पीछा छोड़ बावरी हम हैं रमते जोगी ॥ २ ॥
ऊँचा मन्दिर धौर सखी जहां कामिन चंवर डुलावे ।
हमरे संग क्या लेगी बावरी पत्थर पर दुःख पावे ॥
कहे भरथरी सुनरी निद्रा यहां नहीं तेरा बासा ।
हम तो रहते राम मरोसे गुरु मिलने की आशा ॥ ४ ॥

३६

राम ज्यूं राखे त्यूं रहिये ॥ टेक ॥
जो प्रभु करे भला कर मानो, मुखते बुरा न कहिये ॥ १ ॥
हर होनी अनहोनी भी करदे, सो सब सिर पर सहिये ॥ २ ॥
कृपा कर जो नाम जपावे, सो अन्तर ले गहिये ॥ ३ ॥
महरदास हरि आज्ञा माने, यह सेवक को चाहिये ॥ ४ ॥

शब्द ३७

मोको कहां ढूंढेरे बन्दे, मैं तो तेरे पास में ॥ टेक ॥
ना तीरथ में ना मूरत में, ना एकान्त निबास में।
ना मन्दिर में ना मस्जिद में, ना काशी कैलाश में ॥ १ ॥
ना मैं जप में ना मैं तप में ना मैं व्रत उपवास में।
ना मैं क्रिया कर्म में रहता ना मैं योग संयास में ॥ २ ॥
नहीं प्राण में नहीं पिण्ड में, ना ब्रह्माण्ड अकाश में।
ना मैं त्रिकुडी भवर गुफा में सब श्वासन की श्वास में ॥ ३ ॥
खोजो होय तुरत मिल जाऊँ, एक पल ही की तलाश में।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, मैं तो हूं बिश्वास में ॥ ४ ॥

शब्द ३८

हरि हरि जप लेनी अवसर बीतो जाय ॥ टेक ॥
जो गये सो फिर नहीं आवें, कर विचार मन लाय ॥ १ ॥
यह जग बाजी सांच न जानो, तामें मत भरमाय ॥ २ ॥
काई किसी का है नहीं बोरे, नाहक लिये लगाय ॥ ३ ॥
अन्त समय कोई काम न आवे, जब यम दे बौराय ॥ ४ ॥
चरणदास कहे सहजो बाई, सतसङ्गत शरणाय ॥ ५ ॥

शब्द ३९

नैनों लिख लेनी साईं तेरे हजूर ॥ टेक ॥
आगे पीछे दहने बांयें, सकल रहा भरपूर ॥ १ ॥
जिनको ज्ञान गुरु का नाहीं, सो जानत है दूर ॥ २ ॥

योग यज्ञ तीरथ व्रत साधें, पावत नाहीं कूर ॥ ३ ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जिसी में, सोई हर का नूर ॥ ४ ॥
चरणदास गुरु मोय बताया, सो है सब का मूर ॥ ५ ॥

४०

कान्हा बंशी वारे मोरी गली आजा रे ॥ टेक ॥
कोरी कोरी मठकन दही जमायो, मेरो ही माखन खाजारे ॥१॥
वृन्दावन की कुञ्ज गलिन में, झुक मुखड़ा दिखाजा रे ॥ २ ॥
मैं तो तिहारे पर हुई हूं बावरी, तन की तपत बुझाजा रे ॥ ३ ॥
चरणदास कहे सुखदेव प्यारे नैनों से नैन मिलाजा रे ॥ ४ ॥

४१

कान्हा बंशीवारे उठाना मोरी मटकी ॥ टेक ॥
संग की सहेली जल भर भर सटकी ।
बंशी की धुन सुन में ही रही अटको ॥ १ ॥
दौरानी जिठानी जी से रहे मेरी खटकी ।
देंगी सब ताना एती बार कहां अटको ॥ २ ॥
मटकी उठाऊं नहीं जानूं तेरे घटकी ।
संग ले जाय शोभा सारे पनघट की ॥ ३ ॥
शंभु सखी की नाव परी अटकी ।
जो जानत हो घटकी तो लाज राखो घूंघट की ॥४॥

४२

अब ना रहूंगी राम अटकी म्हारो लगो जो राम से प्रीति ॥टेक॥
मन्दिर जा चरणामृत लेसी, कपटी लोगों ने अटकी ।
ठाकुर जी आगे नृत करूं थी, ताल बजाऊं और चुटकी ॥१॥

राजनीति की सार न जानी, साधांरे संग सटकी ।
देवर जेठ की कान न मानी, पड़ो घूंघट पर अटकी ॥ २ ॥
गहना गूंठी कभी न पहरूं, गन तुलसी की कण्ठी ।
नोसर हार गले रो त्यागो, भूकी नागरनट की ॥ ३ ॥
म्हाने सतगुरु ऐसे मिल गये, लगो ज्ञान की गुटकी ।
मीरां के प्रभु गिरधर नागर, आवागमन से छुटकी ॥ ४ ॥

४३

जो कोई चित्त से मोहे न बिसारे, मैंना बिसारूँ प्रण है यही मेरा ॥
धर्म प्रिय हो धर्म बढाऊ, सफल कार्य कर अर्थ बताऊँ ।
मुक्ति चादे तो पार लगाऊँ पलक्षण मांहि न लागत बेरा ॥१॥
रोग हरूँ चिन्ता सब टारूँ, अभय करूँ शत्रुन को मारूँ ।
अचल भक्त जन वेग उबारूँ, सेवा करू आप बन चेरा ॥ २ ॥
मेरा नाम भक्त सुखदायक, सदा विपत्ति में होत सहायक ।
जो कोई रटे कृष्ण यदुनायक, ताके हृदय करत नित डेरा ॥३॥

४४

अरे लोगों तुम्हें क्या है, या वह जाने या मैं जानूं ॥ टेक ॥
यह दिल मांगे तो हाजिर है वह सर मांगे तो बेसर हूं ।
जो मुख मोड़ूं तो काफिर हूं, या वह जाने या मैं जानूं ॥ १ ॥
वह मेरी बगल छुपा रहता, मैं उसके नाज सभी सहता
वह दो बातें मुझे कहता, या वह जाने या मैं जानूं ॥ २ ॥
वह मेरे खून का प्यासा, मैं उसके दर्द का मारा ।
दोनों का पन्थ है न्यारा, या वह जाने या मैं जानूं ॥ ३ ॥

शब्द ४५

बनै जो कुछ धर्म कर ले, यही एक साथ जावेगा।
गया अवसर न तेरे फिर, यह हरगिज हाथ आवेगा ॥ टेक ॥
दिवाना बनके दुनियाँ में, समय अनमोल खोता है।
दिए लाखों की दौलत भी, न पल रहने तू पावेगा ॥ १ ॥
धरी रह जायगी तेरी, अकड़ सारी ठिकाने पर।
जब आके यम जकड़ गरदन, पकड़ कर धर दबावेगा ॥ २ ॥
कुटुम्ब परिवार सुत जोई, सहायक होगा ना कोई।
तेरे पापों की गठरी खुद, तू ही सिर पर उठावेगा ॥ ३ ॥
गर्भ में था कहा तू ने न भूलूंगा प्रभु तुझ को।
भला तू जाय के अपना उसे क्या मुंह दिखावेगा ॥ ४ ॥
तुझे तो घर से जंगल में, तेरा ही खुद बखुद बेटा।
सुला कर लकड़ियों के ढ़ेर पर, तुझको जलावेगा ॥ ५ ॥
कहे कबीर समझाई, तू कहना मान ले भाई।
नहीं तो अपनी ठकुराई वृथा सारी गंवावेगा ॥ ६ ॥

४६

बन आये की बात रे ऊधो, बन आये की बात रे ॥ टेक ॥
एक समय हरि हमने देखे, मुख धोवत ना हाथ रे।
अब तो कृष्ण भये ब्रह्मचारी, सौ सौ विरियां न्हात रे ॥ १ ॥
एक समय हरि हम ने देखे छीन छीन दधि खात रे।
अब तो कृष्ण भये हैं राजा, चढे सिंहासन जात रे ॥ २ ॥
कर पै पात पात कर ही पै, मांग २ दधि खात रे।

जो माधो इम बन नहिं आवें, तुम क्यों आवत जात रे ॥ ३ ॥
यही बात उनसे ज. कहियो, और बातों को बात रे।
यह बात उनहीं को सोहे, जाके दो जननी दो तात रे ॥ ४ ॥
ज्यूं मधु कुल बसे कष्ट में, बँधा अम्बुज के पात रे।
जो गंगा देवन को दुर्लभ, तामें श्वान नहात रे ॥ ५ ॥
तेल के सग फुलेल होत है महकत बास सुबास रे।
मोती बीच सूत का तागा, मंहगे मोल बिकात रे ॥ ६ ॥
वृन्दावन में गऊ चरावत, गोकुल ही को जात रे।
हाथ लकुटिया काधे कमरिया, रज लिपटाए गात रे ॥ ७ ॥
यही वृन्दावन यही बन कुञ्जन, यही पलाश के पात रे।
हाथ ओट हरि हमसे खाया, दधि माखन और भात रे ॥ ८ ॥
यो मन माधो जो से झगड़ू दे कुब्जा के लात रे।
सूरश्याम कुब्जा संग ब्रज में गोपिन संग लजात रे ॥ ९ ॥

४७

मिलना कठिन है, कैसे मिलूं पिया संग जाय ॥ टेक ॥
समझ सोच पग धरूँ यतन से, करि बहु भांति उपाय।
ऊँची सैल गैल रपटील, पांव नहीं ठहराय ॥ १ ॥
लोक अरु कुल की मर्यादा से, बहुतक मन सकुचाय।
धाय मिलूं पिय से पीहर में तो अनरीत दिखाय ॥ २ ॥
शून्य शिखर पर पिय को महल है, श्वेत ध्वजा फहराय।
शब्द स्वरूपी पिया बसत है, वहां सुरत झकोरा खाय ॥ ३ ॥
दूती सुमति आय धर्मिन को, दीनो पिय हिं मिलाय।
पिय ने पकरि प्रेम से बैयां, लीनो कण्ठ लगाय ॥ ४ ॥

४८

प्रभुजी भले बुरे हम तेरे ॥ टेक ॥
पेट भरे पर महा आलसी, सोवत सांझ सवेरे ॥ १ ॥
तुम समदर्शी अधम उधारन, गिनो न अवगुण मेरे ॥ २ ॥
काम क्रोध अरु ममता तृष्णा, रहत सदा मोहि घेरे ॥ ३ ॥
तुम बिन कौन सहायक मेरो, बैरी बहुत घनेरे ॥ ४ ॥
माया बस यह जन्म गवाया भटक भटक बहुतेरे ॥ ५ ॥
गोपीनाथ आस तज सब की, होउ श्याम के चेरे ॥ ६ ॥

४९

प्रभु तेरी माया लखी न जाय ॥ टेक ॥
सुर नर मुनि कोउ जान न पायो, विधि हरि शम्भु नचाय।
रूप रेख वाके नहीं कोई, ऐसो वेद बताय।
सो प्रभु निज जन कारण तारन, नाना रूप धराय ॥ १ ॥
छिन में राव रंक कर डारे, रंकहि राव बनाय।
अकरण करण करण को अकरण, करत न देर लगाय ॥ २ ॥
पथ अनेक बाणी बहुतेरी कहां २ चित्त फँसाय।
तेरी माया में सब मोहे, न्यारे भेद जनाय ॥ ३ ॥
सबका सार सकल की सम्मति, यह निश्चय जिय आय।
माधव प्रभु को नाम सुमरले, प्रेम सहित हर्षाय ॥ ४ ॥

५०

बाँस चढ़ी हरषानी नटनियां ॥ टेक ॥
शब्द बाँस धुनि डोर पकड़ कर,
गगन में चढ़ मगनानी नटनियां ॥ १ ॥

बाजे अनहद ऊपर बाजें,
चढ़ गई अधर ठिकाने नटनियाँ ॥ २ ॥
सत्यलोक में जाय डङ्का दीना,
गुरु को करत सलामी नटनियाँ ॥ ३ ॥
पदमदास फिर उलटी चढ़कर,
चरण गुरु के लिपटानी नटनियाँ ॥ ४ ॥

५१

बतादे सखी कौन गली गये श्याम ॥ टेक ॥
गोकल ढूंढ वृन्दावन ढूंढ़ा मथुरा में हो गई शाम ॥ १ ॥
मथुरा ढूंढत रैन बिहानी, रात कियो विश्राम ।
भोर भयो जब बन २ ढूंढो, पायो कदमन छांह ॥ २ ॥
कहा कहूं वाके मुख की शोभा, कोटि उदय भये भान ।
चन्द्र सखी भज बालकृष्ण छवि, लाजत कोटि शतकाम ॥ ३ ॥

५२

बम बम्भोले नाथ शिव नाथन के नाथ,
आज मेरी कामना पूरन करो ।
मेरे बाबे की झोली में क्या २ चीज ।
लोंग सुपारी धतूरा का बीज ॥ १ ॥
कोई बजावे शंख गड़ावल, कोई बजावे ताल ।
कोई मांगे खड़ा होकर गोदी में का लाल ॥ २ ॥
कोई चढ़ावे बेल पत्र, कोई चढ़ावे भंग ।
बैल की सवारी कीन्हीं पारवती के संग ॥ ३ ।

५३

अनुभव स्वरूप निज रूप लखा जिन ओ३म् सोऽहं रटा २ रे ॥
अक्षय धन सम्पति मिल जावे, तृष्णा कबहूं मन न डुलावे ।
कर सन्तोष बैठ रहो घर में, बाहर फिर मत उठा २ रे ॥ १ ॥
शान्त चित्त निर्मल बुद्धि होवे, वृथा कल्पना मन की खोवे ।
अन्तर बाहर उज्ज्वल करले, मल बाधा को छुटा २ रे ॥ २ ॥
राग द्वेष के फंद कट जावें, चहुं दिशि समता भाव दर्शावें ।
निश्चय यही एक मन राखे, जगसों दृष्टि हटा २ रे ॥ ३ ॥
नाम रूप गुण लखे न जावें, सत्चित् आनन्द भरम नशावें ।
माखन माखन खालो प्यारे, छोड़ देओ ये मठा मठा रे ॥ ४ ॥

५४

कोई पीवो राम रस प्याला रे ॥ टेक ॥
गगन मण्डल में अमृत बरसै, पीलो साँसम साँसा रे ॥ १ ॥
ऐसा मंहगा अमी बिकत है, छे रत्तो बारह मासा रे ॥ २ ॥
जो पीवे सो जुग जुग जीवे कबहुं न होत बिनाशा रे ॥ ३ ॥
इस रस कारण हुए नृप जोगी, छोड़े भोग बिलासा रे ॥ ४ ॥
सहज सिंहासन बैठे रहते, भस्म लगाय उदासा रे ॥ ५ ॥
गोपीचन्द भरथरी रसिया, गुरु कबीर रहदासा रे ॥ ६ ॥
गुरु दादू प्रसाद को चुनके, पीया सुन्दरदासा रे ॥ ७ ॥

भजन बिन बावरे, तैंने हीरा सा जन्म गंवाया ॥ टेक ॥
कभी न आया सन्त शरण, में ना तैं हरि गुण गाया।
बह बह मरा बैल की नांई सोय रहा उठ खाया ॥ १ ॥
ये संसार हाट बनिये की, सब जग सौदा आया।
चातुर माल चौगणा कीना, मूरख मूल ठगाया ॥ २ ॥
ये संसार फूल संभल का, शोभा देख लुभाया।
मारी चोंच रुई निकसाई मूंडी धुन पछताया ॥ ३ ॥
ये संसार माया का लोभी, ममता महल चिनाया।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, हाथ कछु ना आया ॥ ४ ॥

५६

निर्बल के प्राण पुकार रहे जगदीश हरे जगदीश हरे।
श्वासों के स्वर झनकार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ १ ॥
आकाश हिमालय सागर में पृथ्वी पाताल चराचर में।
यह मधुर बोल गुंजार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ २ ॥
जब दया दृष्टि हो जाती है, जलती खेती हरियाती है।
इस आश पै जन उच्चार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ ३ ॥
सुख दुःखों की चिन्ता है नहीं, भय है विश्वास न जाय कहीं।
टूटे न लगा यह तार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ ४ ॥
तुम हो करुणा के धाम सदा, सेवक है राधेश्याम सदा।
बस इतना सदा विचार रहे, जगदीश हरे जगदीश हरे ॥ ५ ॥

५७

जगदीश तू ही धन धन है ।। टेक ।।

तू सत् चित् आनन्द घन है, दुष्टों का मान मर्दन है, भक्तों का प्राण जीवन है। है तू दीनों का दयाल, साधु सन्तों का प्रतिपाल, सर्वत्र तेरा वर्णन है ।। १ ।।

रज्जाकें हरदो आलम तो, मुश्ताके रहीम राहिम तो. खल्ला को शादो खुरम तो खुदरा उश्शाको महबूब, हरजा जल्वा फ़िगन मरगूब, हर्चे मखफियो रोशन है ।। २ ।।

ओ गौड़ वो काइन्ड टू मी. नाऊ. आई हम्बिल श्रीचर टू दी बाऊ। फोरगिव माई सिन्स ओ दाऊ दाऊ आर्ट माई गोड़ दाऊ आर्ट माई लौर्ड, दाई इक्वल देअर नन है ।। ३ ।।

सरदारा मैनूं भांदा बागों दे विच नहीं आंदा, दीदों दे बिन जी जाँदा, मैनूं करके बेहाल, घुलदा गैरोंदे नित नाल, तुसी मते गुणांदी खन है ।। ४ ।।

आमार बाड़ी मोती आवे, चांदान कोरवे ज्वल खावे, बेला-सारंग बजावे, गावे गावे मिष्टी तान, आमार जीव नेर प्रान, आमार तुमी तोन मोन है ।। ५ ।।

हर लिहेसी मनई मनवा है, भटकायेसी बन बनवा है, दो लागेसी तन मनवा है, एस् एस् टुनवा कौन, जियरा कर लिहेसी आधीन, टंटाननीक एहि खन है ।। ६ ।।

म्हांकी थांकी यारी छे, थांकी गड सरदारी छे. विनती थां से

म्हारी छै, एंडे महिल्या आजो, ढोलो भांगलो पिलाजो, अन्नदाता थांने भोगन है ॥ ७ ॥

त्रैलोक्यपति वन्देहम् करुणायतनं भुवनेशं, कृपया कुरु में निःक्लेशं, यत्र यत्र राधेश्याम तत्र तत्र पातु मां पदमिदं देव अर्पण है ॥ ८ ॥

५८

मेरे भोला शरण में बुलालो मुझे,
घेरा माया ने नाथ बचालो मुझे ॥ टेक ॥
चित्त चंचल है तुम्हारे प्रेम पथ से फिर गया ।
आके अवनति में पड़ा उन्नति के पथ से गिर गया ॥
पड़ा रोता हूं आके उठालो मुझे ॥ १ ॥
कर्म कीचड़ में फंसा निःशक्ति हिल सकता नहीं ।
बस इसी कारण प्रभु का दर्श मिल सकता नहीं ॥
आओ वेग कृपालो निकालो मुझे ॥ २ ॥
है सभी संसार स्वारथ का लऊं किस को शरण ।
शान्तिदायक विश्व में केवल तुम्हारे ही चरण ॥
दुःखी जान हृदय से लगा लो मुझे ॥ ३ ॥
तुम पिता मैं पुत्र हूं तुम बिम्ब मैं प्रतिबिम्ब हूं ।
ब्रह्म तुम मैं जीव सब विधि आप के अवलम्ब हूं ॥
इसी नाते से नाथ निभालो मुझे ॥ ४ ॥
जीत लूं मन इन्द्रियों को नाथ ऐसी शक्ति दो ।
सर्व बाधा से रहित निष्काम अपनी भक्ति दो ॥
भिक्षा अपनी हो भक्ति को डालो मुझे ॥ ५ ॥

नीच नर पशु नार को निर्गुण निकम्मा आलसी ।
चित्त चुराता आप से है पाप में बुद्धि फँसी ॥
काल व्याल से नाथ छुड़ालो मुझे ॥ ६ ॥
दीन जन पापी प्रतापी मोह निशि से दो जगा ।
भक्ति अपने चरण पंकज की इसको लो लगा ॥
अपना जान के जन अपनालो मुझे ॥ ७ ॥

५९

है ज्ञानियों के लब पर या रब कलाम तेरा ।
और योगियों के दिल में बसता है नाम तेरा ॥ टेक ॥
वेदों को जब विचारा हुवा भेद आशकारा ।
बेखुद हुवा है पीकर उलफत का जाम तेरा ॥ १ ॥
है लोक में भी तू ही परलोक में भी तू ही ।
यह भी मकान तेरा वोह भी मुकाम तेरा ॥ २ ॥
जलचर भी तुमको जपते बनचर भी तुमको रटते ।
और शाख गुल पै बुलबुल गाती है नाम तेरा ॥ ३ ॥
खाली न जाऊँ मैं भी हिस्सा मुझे भी पहुंचे ।
है यह फैजाम तेरा और मैं गुलाम तेरा ॥ ४ ॥

६०

भाव के भूखे हैं भगवान् ॥ टेक ॥
भाव न हो सच्चा जो उर में, तो सब व्यर्थ विधान ॥ १ ॥
भाव नहीं तो मनुज देह यह, जीवन मरण समान ॥ २ ॥
भाव शून्य आदर सब छूछा, छूछा है सम्मान ॥ ३ ॥

सत्य हृदय का शुद्ध भाव ही, जग में परम प्रधान ॥ ४ ॥
भाव होय तो ईश्वर दीखे, भाव बिना पाषाण ॥ ५ ॥

६१

गजानन लम्बोदर दातार ॥ टेक ॥

रमत भंवर गणपति गिरिजासुत, रिध सिद्ध के भर्तार ॥ १ ॥
बक्र तुण्ड शोभित कर सुन्दर, वाहन मूष सवार ॥ २ ॥
कनक छत्र शिर चवर ढुलावैं राजत भुजवर चार ॥ ३ ॥
हेमसुतापतिसुत गण नायक अन धन भरत भण्डार ॥ ४ ॥
सिन्दूर अक्षत पुष्प चढ़त अति, भोग मोदक विचार ॥ ५ ॥
युग कर वन्दित हर्ष कृत हों दीजो भवसागर तार ॥ ६ ॥

६२

डगमग डोले दीनानाथ नैय्या भवसागर में मेरी ।
मैंने भर भर जोवन भार, छोड़े तन मोहत बहुवार ।
पहुंचा एक नहीं उस पार, यह भी काल चक्र ने घेरी ॥ १ ॥
टूटा मेरुदण्ड पतवार, पाते चहुं चले ना ब्यार ।
मानी मन माझी ने हार, करसे दुर्गति रात अन्धेरी ॥ २ ॥
उमगे पुंघ जग नजर भुजंग, कटके पटके पाप तरंग, ।
पड़कर पवन कर्म के संग, करती फिरती है चक्करफेरी ॥ ३ ॥
ठोकर मरणाचल से खाय, हट कर डूब जायगो हाय ।
शंकर अब तो पार लगाय, तेरी मार सही बहुतेरी ॥ ४ ॥

६३

श्रीराधेरानी दे डारो ना बंसरो मोरो ॥ टेक ॥
जिस बंशी में मोरे प्राण बसत हैं, सो बंशी गई चोरी ॥ १ ॥
सोने की नाहीं कान्हा रूपे की नाहीं हरे बांस की पोरी ॥ २ ॥
काहे से गाऊं राधे काहे से बजाऊं, काहे से लाऊं गैय्या घेरी ॥३॥
मुख से गावो प्यारे ताल से बजाओ, लकुटी से लावो गैय्या घेरी ।४
चन्द्रसखी भज बाल कृष्ण छवि, हरि चरणन की चेरी ॥ ५ ॥

६४

दिलवर पास बसदा ढूंढन किथे जावना ॥ टेक ॥
गली ते बजार ढूंढो, शहर ते दयार ढूंढो ।
घर घर हजार ढूंढ़ो पता नहीं पावना ॥ १ ॥
मक्के ते मदीने जाइये, मत्थे चाहे मसीत घसाइये ।
ऊंची कूक बाग सुनाइये, मिल नहीं जावना । २ ॥
गंगा भावे जमना न्हावो, काशी ते प्रयाग जाओ ।
बद्री केदार जाओ, मुड़ घर आवना ॥ ३ ॥
देश ते दशोर ढूंढो, दिल्ली से पशोर ढूंढो ।
भावें ठौर ठौर ढूंढो, किसे न बतावना ॥ ४ ॥
बनो जोगी ते वैरागो, सन्यासी जगत त्यागी ।
प्यारे से न प्रीति लागी, भेष की बटावना ॥ ५ ॥
भावे गले माल डाल, चन्दन लगाओ भाल ।
प्रीति नहीं साईं नाल, जगत मुंह दिखावना ॥ ६ ॥

मोमनादि शकल बनावें, काफ्रां दी कम्म कमावें।
मत्थे ते महाराव लगावें, मौलवी कहावना ॥ ७ ॥

६५

मन ना रङ्गाये रङ्गाये जोगी कपरा ॥ टेक ॥
आसन मार मन्दिर में बैठे, नाम छांड पूजन लागे पथरा ॥१॥
कनवा फाड़ाय जोगी जटवा बढ़ोले,
दाढी बढ़ाय जोग ह्वैगये बकरा ॥ २ ॥
जंगल में जाय जोगी धुनियां रमोले,
काम जराय जोगी बन गये हिजरा ॥ ३ ॥
मथवा मुड़ाय जोगी कपड़ा रंगोले,
गीता बाँच के जोगी ह्वैगये लबरा ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो,
जम दरवजवा बांधन जाहरे पकरा ॥ ६ ॥

६६

राम जन मन रञ्जन राम, राम भव भय भंजन राम।
राम खल दल गञ्जन राम, सीताराम सीताराम ॥
दुष्ट निकन्दन आनन्द कन्दन, दशरथ नन्दन राम।
रघुकुल के पति राम, निबल के बलराम ॥
निर्धन के धन राम, सीताराम सीताराम।
वृथा की छोड़ के सब धूम धाम राम कहो।
विचरते सोते जागते तमाम राम कहो ॥
जो तुम को चाहिये आराम राम कहो।
मेरे तो इक राम, भज लेरे मन राम सीताराम सीताराम ॥

६७

वैराग योग कठिन उधो हम न करव हो ।।टेक ।।
कैसे छोड़व ऐसा देश जटा मुकुट धरव वेश ।
अंग विभूति लाय जहर खाय मरव हो ।। १ ।।
कैसे तजव अंग चीर मृगछाल धरव शरीर ।
सुखद सेज छोड़ भुयाँ कैसे पड़व हो ।। २ ।।
जमना जल अति गम्भीर तन मन नहीं धरत धीर ।
कृष्ण विरह लागि वरु डूबी मरव हो ।। ३ ।।
एक तो दुबल गात दूजे लिखव बिरह पात ।
सूर श्याम दरश बिना प्राण तजव हो ।। ४ ।।

६८

छबि अपनी दिखाजा मुरारी हमें ।। टेक ।।
यमुना के तट पर जाय के गो गी पिलाय के ।
मोहे थे तीनों लोक को बंशी बजाय के ।।
वही वंशी सुनाजा मुरारी हमें ।। १ ।।
जाकर कदम्ब के पेड़ पर वस्त्र चुराय के ।
बैठे थे आसन मार कर मुखड़ा छिपाय के ।।
दीजे दर्शन मुरारी खरारी हमें ।। २ ।।
बालक अवस्था बीच में माखन चुराय के ।
माता के हाथ जाय के ऊँखल बँधाय के ।।
वही सूरत दिखाजा बिहारी हमें ।। ३ ।।
माटी जो खाई आपने ब्रज भूमि जाय के ।

चौदह भुवन त्रैलोक्य को मुख में दिखाय के ॥
दीजे भक्ति में प्रीति गिरधारी हमें ॥ ४ ॥
सुनिये हे आनन्दकन्द हो ब्रजचन्द आनके ॥
रक्षा हमारी कीजिये बालक जो जानके ॥
दीजै भव सेती पार उतारी हमें ॥ ५ ॥

६९

शरण प्रभु की आवोरे यही समय है प्यारे ॥ टेक ॥
छल कपट और झूठ को त्यागो, सत्य में चित्त लाओ रे ॥
उदय हुआ ओं नाम का भानू, आओ दर्शन पावो रे ॥
पान करो इस अमृत फल को, उत्तम पदवी पावो रे ॥
हरि की भक्ति बिना नहीं मुक्ति, दृढ़ विश्वास जमावो रे ॥
मनुष्य जन्म अमोलक है यह, वृथा न इसे गंवाओ रे ॥
करला नाम हरि का सुमरन, अन्त को ना पछताओ रे ॥
धन्य दया जो सब को देवे, पल मत तुम बिसराओ रे ॥
छोटे बड़े सब मिलकर खुशी से, गुण ईश्वर के गाओ रे ॥

७०

दयार्द्र हो दयालु दासता विनाश कीजिये ।
मिटा प्रमाद शांतिका बिमल प्रकाश दीजिये ॥
विमोह वश न हम कभी स्वदेश का अहित करें ॥
परोपकार के लिये प्रसन्न चित्त हो मरें ॥
यहां स्वतन्त्रतार्क की नवीन ज्योति जगमगे ।
अनीति नाव न्याय सिन्धु में निराश्रय डगमगे ॥

सुवीर भूमि वीर भूमि फिर बने जहान में।
परार्तिहरिणी बने स्वदेश समुत्थान में॥
समष्ठि प्रेम में सदा समोत प्रोत हम बहें।
बचें प्रपंच जाल से सुमार्ग पर डटे रहें।
न देश शत्रु भी बने स्वदेश में हमें कभी।
हो कष्ट भले ही हमें न कष्ट हो उसे कभी॥
जीवन परोपकारमय पवित्र प्रभो बनाइये।
कृपालु हो कृपा अबोध जनों पर दिखाइए॥
पथ में निराश्रयी बना न भूलना हमें प्रभो।
हम भूल जाँय तदपि तुम हमें न भूलना प्रभो॥

७१

हे प्रभो! अशरण शरण सद्ज्ञान हम को दीजिये।
हम निर्बलों को दिव्य बल ते सबल सक्षम कीजिये॥
दीजिये वर हर समय हम देश सेवा रत रहें।
देश हित दुःख के प्रहारों को सुमन सम हम सहें॥
स्वार्थ में बीते न क्षण परमार्थ जीवन सार हो।
सोते सजग हर दशा में मन विषय देशोद्धार हो॥
सेवा व्रती बनकर सभी तब भक्ति अधिकारी बनें।
ब्रह्मचारी सदाचारी वीर व्रतधारी बनें॥
टल जाँय अर्बुद विन्ध्य हिमगिरि पर न हम पग छे हटें।
कट जांय तिल २ मुदित हो सन्मार्ग पर नित हम डटें॥
यह है तभी सम्भव प्रभो जब तब कृपा की कोर हो।
हो विश्व रूप विराट के कर विश्व शासन डोर हो॥

तम पूर्ण दिशि घन गर्जना वर्षा व मण्डल से गिरें।
भव जलधि में ले तरणि जर २ हे प्रभो ! हम चल पड़ें ॥
आपके ही हाथ हमको पार प्रभो ! पहुंचाइए।
परम पितु सन्तान को स्वातान्त्र्य मार्ग दिखाइए ॥

७२

मैं श्याम को ढूंढन निकसी मुझे श्याम डगर बतलाओ।
मैं श्याम के प्रेम की प्यासी मेरे प्रेम की प्यास मिटाओ ॥टेक॥
मन भ्रमरा बन केलि कुञ्ज बन में अलियन कलियन भटके।
पीपी पपीहा प्यू प्यू करके श्याम २ नभ बोलेरे ॥ १ ॥
श्याम नाम कैसो मीठो है कानन में रस घोरे रे।
अरे श्याम श्याम नाम बोले रे ॥ २ ॥

७३

सुन्दरि राधे आवे बनी, ब्रज रमणी गण मुकुट मणी ॥ टेक ॥
कुञ्चित केशिनि निरुपम वेशिनि रसिया वेशिनि मंगिनिरे ॥
अधर सुरंगिनि अंग तरंगिनि नव नव संगिनिरे ॥ १ ॥
कुञ्जर गामिनि मोतिम दशनि दामिनि चमक निहारिनीरे ॥
अभरणि धारणी जग चित हारिणि श्यामर हृदय विहारिनिरे ॥
नव अनुरागिनि अखिल सुहागिनि पञ्चम रागिनि सोहनिरे ॥
राम विलासिनि हास विकाशिनि गोविन्द दस चित मोहिनिरे ॥

७४

भगवन् तुम्हीं बतादो किसकी शरण गहें हम।
तज कर जगत् पिता को किससे विथा कहें हम ॥ टेक ॥
भव सिन्धु है अपारा सूझे न वार पारा।
तेरे बिना सहारा मझधार मैं बहें हम ॥ १ ॥
हा ! जगत आह कल २ पछतायें हाथ मल मल।
अब कल पड़े न पल २ मन मार कर रहे हम ॥ २ ॥
मानो नहीं सुनो हा ! फिर सोच लो हृदय की।
ये धमकियां कहां तक कहदो भला सहें हम ॥ ३ ॥

भजन

७५

सांवल पिया मोरी रंग दो चुनरिया ॥ टेक ॥
ऐसी रंग दो रंग नहिं छूटे, धोबिया धोवे चाहे सारी उमरिया ॥
जब दोगे तब लेके उठूँगी, बीत जाये चाहे सारी उमरिया ॥
या तो रग दो या मोल मंगादो, प्रेम नगर में लगी है बजरिया ॥

७६

तुझे क्या खबर है मैं क्या देखता हूं।
मैं झुक २ के उसकी अदा देखता हूं ॥ टेक ॥
तू बुतखाने में मुझको जाने दे जाहिद।
जरा ठैर अपना खुदा देखता हूं ॥ १ ॥

खिची दिल में तस्वीर उस सनम की।
मैं जब चाहूं गरदन झुका देखता हूं॥ २॥
मकाबे में क्या बुतकेदे में भी जाहिर।
मैं उसको ही जलवेनुमा देखता हूं॥ ३॥
झुकाता हूं मैं शौक से अपनी गरदन।
जो खंजर कमर से जुदा देखता हूं॥ ४॥

७७

हमें तेरे दीदार की आरजू है।
शबोरोज दिल में यही जुस्तजू है॥ टेक॥
हमारी यह हस्ती है तेरा यह पर्दा।
अगर नेस्त यह है तो फिर तू ही तू है॥ १।
निकल जाय दम तेरे कदमों के नीचे।
यही दिल की हसरत यही आरज है॥ २॥
गुलिस्तां में जाकर हरेक गुल को देखा।
न तेरी सी रंगत न तेरी सी बू है॥ ३॥
नहीं मुझको भाती है बातें किसी की।
सुनी जब से उस यार की गुफ्तगू है॥ ४॥
समाया है नजरों में जब से तू मेरी।
जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है॥ ५॥
दिवाना समझ करके देते हो गाली।
जबां को सम्हालो यह क्या गुफ्तगू है॥ ६॥
मिसरा—तू तो जिस खाक को चाहे बने चन्दा ऐ पाक।
मैं खुदा किसको बनाऊं जो खफा तू हो जाय॥

मुझ में तू ऐसा समाजा कि मैं मैं न रहूं।
तुझ में मैं ऐसा समाऊँ कि तू ही तू हो जाय॥
हरम और दहर के झगड़े तेरे छुपने से पड़े।
तू अगर पर्दा उठाले तो तू हो तू हो जाय॥
यह है राज मरूफो न कहना तू आजिज।
न यह है न वो है न मैं हूं न तू है॥ ७॥

७८

दूसरा कौन है जहां तू है, कौन जाने तुझे कहां तू है॥ टेक॥
तू हो खिल्वत में तू ही जल्वत में।
कहीं पर पिन्हां कहीं अयां तू है॥ १॥
रंग तेरा चमन में बू तेरी गुल में।
खूब देखा तो बांगवां तू है॥ २॥
जिस्म कहता है जान है तू ही।
जान कहती है जाने जां तू है॥ ३॥
नहीं तेरे सिवा यहां कोई।
मेजबां तू है मेहमा तू है॥ ४॥
महरमे राज तो बहोत हैं अमीर।
जिसको कहते हैं राजदां तू है॥ ५॥

७९

धुन रे धुनियां अपनी धुन धुन धुन।
पराई धुनी का पाप न पुन धुन॥ टेक॥
तेरी रुई में चार बिनौले।
सब से पहले उनको चुन॥ १॥

मिसरा–फकर बकरे ने किया मेरे सिवा कोई नहीं।
मैं ही मैं हूं इस जहां में दूसरा कोई नहीं॥
जब न मैं मैं तरक की मगरूर के असबाब ने।
फेर दी तब जल के गरदन पै छुरी कस्साब ने॥
गोश्त हड्डी और चमड़ा जो था जिस्मे जार में।
कुछ पका और कुछ पिसा कुछ लुट गया बाजार में॥
रह गई आंते फकत मैं मैं सुनाने के लिए।
ले गया नद्दाफ उन्हें धुनकी बनाने के लिए॥
जर्ब से सोटे के जिस दम तांत घबराने लगी।
मैं के बदले फिर तुही तू की सदा आने लगी॥
अच्छी तो तब धुन की जावे।
सगरी तांत बजे तुन तुन॥ २॥
सांस का तन के ताना बाना।
जामये वहदत तन पर बुन॥ ३॥
मिसरा– न ढूंढो हक को जमीं पर न आस्मां ढूंढो।
खुदा को उसकी खुदाई के दरमियां ढूंढो॥
यहां ही होगा किसी गोशे में निहां होगा।
तलाश घर में करो अपना ही मकां ढूंढो॥
दिखाई देता है जो चांद साफ मतले पर।
तुम अपनी आंखें जरा खोलो दरमियां ढूंढो॥
तुम्हारे परदये दिल में है दिलरुबा मौजूद।
झुका के गर्दन तसलीम मेरो जां ढूंढो॥

तारे नफ्स को कस कर पहले।
अल्लाहू की बजा तुन तुन ॥ ४ ॥

८०

नाहिन रह्यो हिये में ठौर ॥
नन्दनन्दन अछत कैसे आनिये उर और ॥
चलत, चितवत, दिवस, जागत, स्वप्न सोवत रात।
हृदय ते वह श्याम मूरति छिन २ इत उत जात।
कहत कथा अनेक ऊधो लोक लाज दिखान ॥
कहा करौं तन प्रेम-पूरन घट न सिन्धु समात ॥
श्याम गात सरोज-आनन ललित गति मृदु हास।
सूर ऐसे रूप कारण मरत लोचन प्यास ॥

८१

दिल का दिल बातें बना कर ले गया।
वो तो माखन भी चुरा कर ले गया ॥ टेक ॥
कौन लड़ता था उसे माखन चुराने के लिये।
लड़का था आँखें लड़ा कर ले गया ॥ १ ॥
ढूंढत हैं उसको जंगल में हिरन।
होश तक नजरें मिला कर ले गया ॥ २ ॥
गोपियों को चेंकुलें पैदा हुई।
चोर गोपियों के चुरा कर ले गया ॥ ३ ॥
वो सफाई उसने की है दिल के साथ।
बातों बातों में उड़ा कर ले गया ॥ ४ ॥

होश तक उसने न छोड़े ऐ नजीर।
ले गया मुरली बजा कर ले गया ॥ ५ ॥

८२

छवि दिखलादे कोई सांवरे मुरारी की।
बसी है दिल में सूरत मोर मुकुटधारी की ॥ टेक ॥
केश पकड़ कर कंस को भी जा मारा।
सभा में लाज रखी द्रौपदी विचारी की ॥ १ ॥
भूल सब बैठे हैं धर्म कर्म अपने को।
सुनादे आके कथा गीता पियारी की ॥ २ ॥
चराई गाय तुमने ग्वाल बने गोकुल के।
समझ न कोई सके लीला बिहारी की ॥ ३ ॥
प्रेम जैसे किया तुम से नासर ने।
हो गई दुश्मन ये खलक तेरे पुजारी की ॥ ४ ॥

८३

बुत में भी तेरा यारब जलवा नजर आता है।
बुतखाने के परदे में काबा नजर आता है ॥ टेक ॥
साकी के तसव्वुर में दिल साफ किया ऐसा।
जब सर को झुकाता हूं शीशा नजर आता है ॥ १ ॥
ऐ इश्क कहीं ले चल ये दयरो रहम छोड़े।
इन दोनों मकानों में झगड़ा नजर आता है ॥ २ ॥
जिस रोज से साफी का इकजाम पीया है।
उस रोज से हर कतरे दरिया नजर आता है ॥ ३ ॥

के रुतबे को महशर न कोई जाने।
अल्लाह भी मजनूं को लैला नजर आता है॥ ४॥

८४

लियर बालिया सांई निभाईं, दिल लालियां पारियां॥ टेक॥
डूंगी नदिया नाव पुरानी, हों अनतारन तिरना न जानो।
बेड़े नूं पार लगाईं॥ निभाई दिल लालियां यारियां॥ १॥
कन फड़े वाके मुद्रा वे पड़यां, घर २ अलख जगाईं॥ २॥
पाट पटन तेरा सूबस बसियो, पाक जमाल विखांहि॥ ३॥
गेरुवे कपड़े खुल्ले नूं केश थे, इश्क नूं दाग लगाई॥ ४॥

८५

प्रभू मैं शरणगति तेरी, निवारो शीघ्र विपति तेरी॥ टेक॥
अज्ञानी जानत नहीं धर्माऽधर्म विचार।
जो तोहे भावे धर्म है दूजा सभी आसार॥
नाथ काटो ममता बेरी॥ १॥
निराश्रयों का आसरा निर्धारन आधार।
मेरा तुम बिन कोई नहीं ऐ मेरे सिर्जनहार॥
करो भवपार नाव मेरी॥ २॥
तू प्रभू अगम अपार है बेहद और थे थाह।
निराकार परमात्मा सब से बेपरवाह॥
न जाने क्या मरजी तेरी॥ ३॥
जो जो मैं हूं सो सो तू है दूजा और न कोय।
अहं आत्मा ब्रह्म हूं यह भाव समपूं तोय॥
प्रगट हो अब न करो देरी॥

महात्माओं के वाक्य ।

हे मेरे ईश्वर ! मेरे जीवन के लबालब भरे पात्र से तू कौनसा दिव्य रस पान कराना चाहता है ।

त्याग मेरे लिये मुक्ति नहीं है मुझे तो आनन्द के सहस्रों बन्धनों में मुक्ति का रस आता है ।

आदमी जितना आप बिगाड़ करता है उतना दूसरे नहीं कर सकते । जो कुछ हम आप सीखते हैं उसका असर दूसरों की सीख से बढ़ कर है ।

उपदेश और अच्छी सलाह जहाँ से मिले आदर के साथ स्वीकार करो । देखो मोती सा अनमोल पदार्थ सीप जैसी तुच्छ वस्तु से निकलता है । जो अच्छी सलाह नहीं सुनता वह धिक्कार सुनेगा ।

अर्थ सिद्धि की दो कुञ्जियां हैं बुद्धि और आशा संयुक्त उद्योग । बिना इनके आदमी संसार में बढ़ नहीं सकता ।

जिसने किसी काम को पूरा करने का प्रण ठान लिया वह उसको अवश्य कर लेगा ।

कर्ता सब पशु पक्षियों को आहार देता है परन्तु उकनी मांद में नहीं डाल आता ।

धन की मिठास उसको मिलेगी जिसने उसकी कमाई में महनत की कड़वाई को चक्खा है ।

तैमूर लंग का कथन है कि यदि तुम प्रजा को आराम देना चाहते हो तो न्याय के खड्ग को आराम न लेने दो। न्याय में कोमलता मिली रहने से वह सोना और सुगन्ध हो जाता है।

उमर भक्त ने किसी गुलाम से जो बकरी चराता था पूछा कि एक बकरी मेरे हाथ बेचेगा। उसने जवाब दिया कि बकरियों का मालिक दूसरा है मुझे तो इनके चराने का काम सुपुर्द है। इस पर उमर बोले कि इनका मालिक यहां तो नहीं देखता है उससे कह दो कि एक बकरा को भेड़िया उठा ले गया। तब चरवाहे ने उत्तर दिया कि जो बकरी का मालिक नहीं देखता तो घट घट व्यापी मालिक तो देखता है। यह सुन कर उमर रो पड़ा।

भलों का संग करो। कुसंग से बचो बड़ों की आज्ञा पालन करना मनुष्य का धर्म है। बड़ों से लड़ना अपना अपघात करना है। बड़ों की सीख संसार को कीच में न फँसने के लिए लाठी का काम देती है। समझदार को चाहिये कि सदा बड़े का संग करे।

यूनान का फीमागोरस पुनर्जन्म में दृढ़ विश्वास रखता था उसने कहा कि मैं पहले जन्म में फौज का अफसर था और लड़ाई में मारा गया। उसके पता देने से एक कन्दिरा में जहां लड़ाई हुई थी उसके हथियार पड़े हुए मिले। इसी तरह अपने बहुत से चेलों के पिछले जन्मों का हाल बताया और लोगों को प्रत्यक्ष प्रणाम से निश्चय करा दिया।

प्यारे ! अगर तू न बोलेगा तो मैं अपने हृदय को मौन से भर लूंगा, मैं चुप चाप पड़ा रहूंगा और तारों से भरी हुई रात्रि की तरह प्रतीक्षा करूंगा तेरी बाणी की सुनहरी धाराएं प्राकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी।

लोग अपने विधि विधानों से मुझे जकड़ने के लिए आते हैं किन्तु मैं उन्हें टाल देता हूं क्योंकि मैं तो केवल प्रेम के कर कमलों में आत्म समर्पण करना चाहता हूं। मुझे आज नींद नहीं, रह २ कर मैं द्वार खोलता हूं और अन्धेरे में बाहर की ओर देखता हूं मैं विस्मित हूं कि तेरा रास्ता किधर है। दुख रूपी दूत तेरे द्वार को खटखटा रहा है। उसका संदेश है कि तेरा स्वामी जगता है और रात्रि के अन्धकार में वह मुझे प्रेमाभिसार के लिये बुला रहा है। वह ऐसे समय आया जब रात्रि का सन्नाटा था वह मेरे इतने नजदीक आता है कि जिसकी श्वास मेरे शरीर में लगती है।

मेरा छोटा हृदय उनके हाथों के अमृतमय स्पर्श से अपने आनन्द की सीमा को खो देता है और उसमें ऐसे उग्दार उठते हैं कि जिनका वर्णन नहीं हो सकता।

संसारी जनों का प्रेम मुझे सब तरह से बान्धने का यत्न करता है और मेरी स्वतन्त्रता को छीन लेता है परन्तु तेरा प्रेम जो उनके प्रेम से बढ़कर है निराला है वह मुझे दासता की शृंखला में नहीं बांधता किन्तु मुझे स्वतन्त्र रखता है।

मैं आकारों के समुद्र में इस आशा से गहरी डुबकी मारता हूं कि निराकार का पूर्ण मोती मेरे हाथ आजाय।

मैं अपने जीवन भर अपने गीतों के द्वारा तुझे ढूंढता रहा हूं। अब मैं उत्सुक हूं कि मर कर अमरत्व में लीन हो जाऊँ।

मैं तेरी कथाओं को अमर गीतों में प्रकट करता हूं और तेरा रहस्य मेरे हृदय से निकल पड़ता है।

मैं तुझे तेरी जीत की भेंटों और अपनी हार के हारों से अलंकृत करूँगा।

जीवन रूपी नौका को पतवार को जोड़ते समय मैं जानता हूं कि अब तू इसे अपने हाथ में ले लेगा।

नीलाकाश से एक आंख मेरी ओर देखेगी और इशारे से चुपचाप मुझे अपनी ओर बुलाएगी।

जब मैं यहां से विदा होऊँ तब मेरे अन्तिम बचन यह हों कि मैंने जो कुछ देखा है उससे बढ़ कर और कुछ नहीं हो सकता।

जब मां बच्चे को दाहने स्तन से छुड़ाती है तो वह चीखता है और दूसरे क्षण में ही जब उसे बांया स्तन देती है तब उसे आश्वासन होता है।

मुझे उस समय की कोई खबर नहीं जब मैंने पहिले पहल इस जीवन में प्रवेश किया था।

जब प्रातःकाल मैंने आकाश को देखा तो मुझे उसी क्षण मालूम हुआ कि मैं इस जगत् में कोई अपरिचित जन नहीं हूं और उस नाम रूप रहित अज्ञेय शक्ति ने मेरी मां का रूप धारण कर मुझे अपनी गोद ले लिया है। हे मेरे मित्रो अब मेरे जाने की बेला है। तुम सब मेरे लिये शुभ कामना करो। आकाश वहां से रक्त वर्ण हो रहा है और मेरा मार्ग सुहावना है। मैं अपनी यात्रा पर खाली हाथ और आशा पूर्ण हृदय के साथ जाता हूं।

मुझे छुट्टी मिल गई है। ऐ मेरे भाइयो! मुझे विदा करो मैं तुम सबको प्रणाम करता हूं। मेरा बुलावा आया है और मैं यात्रा के लिए तयार हूं।

मैं जो कुछ हूं, मेरे पास जो कुछ है मैं जो कुछ आशा करता हूं और मेरा प्रेम यह सब गम्भीर रीत से सदा तेरी ओर प्रवाहित होते रहे हैं। मेरे ऊपर तेरे नयनों का अन्तिम कटाक्ष पड़ते ही मेरा जीवन सदा के लिए तेरा हो जायेगा।

पुष्प पिरो लिए गए हैं वरके लिए माला तयार है मृत्यु के पश्चात् वधु भक्त अपने घर से विदा होगी और अपने स्वामी से शून्य रात्रि में अकेली मिलेगी।

जब मृत्यु मेरे द्वार को खटखटायेगी तब अपने प्यारे अतिथि के आगे जीवन का भरपूर पात्र रख दूंगा। उसे खाली हाथ न जाने दूंगा।

प्रवीण शिल्पी अनेकों प्रतिमायें बनाते हैं। जब उनका

समय आजाता है तब वे विस्मृति की पवित्र धारा में विसर्जन करदी जाती हैं।

बसन्त की मन्द २ वायु रह रह कर तेरे निर्जन भवन में उन फूलों के समाचार लाती है जो पूजा में तुझे नहीं चढ़ाये जाते।

मैं तेरे सन्ध्यागमन के सुनहरे शामयाने के नीचे खड़ा हूं। और अपने उत्सुक नयनों को तेरे मुखारविन्द की ओर उठाता हूं।

हाथ जोड़ कर अश्रु जल से मैं उसकी पूजा करूंगा। और अपने हृदय के रत्न को उसके चरणों में अर्पण करूंगा।

हे प्रभो! तेरे हाथ में अनन्त समय है हमारे पास वृथा नाश करने के लिए तनिक भी समय नहीं है इस लिए हमें अपने अवसरों और सफलताओं के लिये छोना झपटी करनी चाहिए।

हम इतने दरिद्री हैं कि विलम्ब नहीं कर सकते झगड़ा करने वालों के साथ झगड़ा करने में मेरा समय निकल जाता है। तेरी वेदी अन्त तक शून्य पड़ी रह जाती है। दिन समाप्त होने पर डरता हूं कि कहीं तेरा द्वार बन्द न हो जाय। पर ज्ञात होता है कि अभी समय बाकी है।

मेरे जीवन के प्रत्येक क्षण का नियन्ता तू है। सब के भीतर रह कर तू बीजों में अंकुर, कलियों में फूल और फूलों में फल उत्पन करता है।

यदि कोई आदमी मोटा और पेटू हो जाता है और सोने वाला व चरपाई पर लेटने वाला बन जाता है तो वह

मूर्ख उस शूकर की भाँति होता है जो मैले पर गुजारा करता है और बार बार जन्म लेता है।

तृष्णा से प्रेरित हुए मनुष्य बेड़ियों और बन्धनों से जकड़े हुए पाश में फँसे हुए शशे की भांति चिर काल तक बार २ दुःख उठाते रहते हैं।

आंख का निग्रह करना उत्तम है नासिका का निग्रह उत्तम है कानोंका निग्रहअच्छा है और जिह्वाका निग्रह उत्तम है।

ऐ भिक्षुक ! ध्यान कर और लापरवा मत बन। अपने विचार को ऐसे पदार्थ पर मत लगा जो तुझे दुख देता है, क्योंकि ऐसा न हो कि अपनी लापरवाई के कारण नर्क में तुझे अग्नि का गोला निगलना पड़े और उस अवसर पर जलते हुये तू चिल्ला कर कहे कि यह दुख है।

बुद्धिमान् पुरुष उस बेड़ी को दृढ़ नहीं कहते जो लोहे, लकड़ी और सन की बनी हुई हो। उनसे कठिन पाश स्त्री और बाल बच्चों के लिए आभूषण और रत्नों की चिन्ता है।

मैंने सब जीत लिया है मैं सब कुछ जानता हूं मैं जीवन की प्रत्येक दशा में दुःख से मुक्त हूं मैं सब त्यागी हूं और तृष्णा का नाश करके स्वतन्त्र हो गया हूं। स्वयं पढ़ कर मैं किसे पढ़ाऊं। हमारा अस्तित्व हमारे विचारों का फल है, यह हमारे विचारों पर अवलम्बित है, और हमारे विचारों से ही इसकी सृष्टि है। यदि मनुष्य दुष्ट विचार से भाषण करता है, या कर्म करता है तो दुःख उसका पीछा करता है जैसे कि च

गाड़ी में जुड़े हुए बैल के पांव का अनुगामी होता है। यदि मनुष्य शुद्ध विचार से भाषण करता है तो सुख उसका इस तरह अनुवर्ती होता है कि जिस तरह उसका छाया सदैव उसका साथ देता है।

अय परम प्यारे ! तुम जो अपने भक्तों उपासकों को परम सुख एवं परम शान्ति का दान किया करते हो: यह तुम्हारी अपनी ही सत्यता सत्य स्वरूपता है और तुम्हारी अपनी ही कृपा का परिणाम है।

लालच द्वारा एकत्रित किए धन की कामना मत करो क्योंकि भोगने के समय उसका फल तीखा होगा।

वेद भी अगर विस्मृत हो जांय तो फिर याद कर लिए जा सकते हैं, मगर सदाचार से यदि एक बार भी मनुष्य गिर जाय तो, सदा के लिए अपने स्थान से भ्रष्ट हो जाता है।

यदि कोई आदमी मूर्ख और अज्ञानी है तो केवल मौन व्रत धारण करने से मुनी नहीं हो जाता, बल्कि वह बुद्धिमान् आदमी जो भलाई और बुराई की तुलना करके भलाई को ग्रहण करता है मुनी है।

लबालब भरे हुए गांव के तालाब को देखो जो मनुष्य सृष्टि से प्रेम करता है उसकी सम्पत्ति उसी तालाब के समान है।

दिलदार आदमी का वैभव गांव के बीचों बीज उगे हुए और फलों से लदे हुए वृक्ष के समान है।

गरीब को देना ही दान है, और सब तरह का देना उधार देने के समान है।

दान लेना बुरा है चाहे उससे स्वर्ग क्यों न मिलता हो। और दान देने वाले के लिए चाहे स्वर्ग का द्वार ही क्यों न बन्द हो जाय, फिर भी दान देना धर्म है।

हमारे पास नहीं है ऐसा कहे बिना दान देने वाला पुरुष ही केवल कुलीन होता है।

याचक के होठों पर सन्तोष जनित हंसी की रेखा देखे बिना दानी का दिल खुश नहीं होता।

आत्मजयी की विजयों में से सर्व श्रेष्ठ जय है जो भूख को जय करना। मगर उस विजय से भी बढ़ कर उस मनुष्य की जय है जो भूख को शान्त करता है।

मैं चुपचाप पड़ा रहूंगा और तारों से भरी और धीरता से अपना शिर झुकाये हुये रात्रि की भान्ति प्रतीक्षा करूँगा।

निःसन्देह प्रभात का आगमन होगा और अन्धकार का नाश होगा और तेरी वाणी की सुनहरी धाराएं आकाश को चीर कर नीचे की ओर बहेंगी।

तब मेरे पक्षियों से प्रत्येक घोंसले से तेरे शब्द गीतों के रूप में उड़ेंगे और मेरी समस्त वन वाटिकाओं में तेरे सुख फूलों के रूप में खिल उठेंगे।

वही तो मेरा अन्तरात्मा है जो मेरे जीवात्मा को अपने गम्भीर अदृश्य स्पर्शों से जागृत करता है।

यह वही है जो इन नेत्रों पर अपना जादू करता है कि मेरे हृदय रूपी वीणा के तन्तुओं पर सुख दुःख के विविध सुरों को आनन्द से बजाता है।

यह वही है जो इस माया के जाल को सुनहले और रूपहले हरे और नीले क्षणिक रंगों में बुनता है और उन जालों में से अपने चरणों को बाहर निकालने देता है जिनके स्पर्श मात्र से मैं अपने आपको भूल जाता हूं।

दिन आते हैं और युग के युग बीतते जाते हैं यह केवल वही है जो मेरे हृदय को नाना नामों नाना रूपों और हर्ष शोक के नाना उद्वेगों में घुमाता है।

त्याग मेरे लिये मुक्ति नहीं है। मुझे तो आनन्द के सहस्रों-बन्धनों में मुक्ति का रस आता है।

तू मेरे लिये सदा नाना रंगों और गन्ध के अमृत को वर्षा किया करता है और मेरे इस मिट्टी के पात्र को नवीनता भर देता है। मेरा संसार अपने सैंकड़ों दीपों को तेरी ज्योति से प्रज्वलित करेगा और तेरे मन्दिर की वेदी पर उन्हें चढ़ायेगा।

नहीं मैं अपनी इन्द्रियों के द्वार कभी बन्द न करूँगा। शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध का सुख तेरे परमानन्द को उत्पन्न करेगा।

हां मेरे सब भ्रम और संशय तेरे आनन्द की ज्योति में भस्म हो जायेंगे, और मेरी सब वासनायें प्रेम रूप फलों में

परिणत हो जायगी ।

हे प्रभो ! हम जीवों को कुछ दिया है वह हमारी सब आवश्यकताओं को पूरा करता है, और फिर तेरे पास ज्यों का त्यों लौटा जाता है।

नदी अपना नित्य काम करती है और खेतों बस्तियों में होकर वेग से बहती चली जाती है। तथापि उसकी निरन्तर धारा तेरे चरणों की ओर प्रक्षालन के लिये जाती है।

फल अपने सौरभ से वायु को सुगन्धित करते हैं तथापि उनकी अन्तिम सेवा यही है कि अपने को तेरे चरणों में अर्पण करें।

तेरी इस पूजा से संसार कुछ दरिद्री नहीं होता कवि के शब्दों का अर्थ लोग अपनी रुचि के अनुसार लगाते हैं किन्तु उनके वास्तविक अर्थ का लक्ष्य तू ही है।

हे मेरे जीवन स्वामी ! क्या दिन प्रतिदिन मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा ? हे भुवनेश्वर ! क्या कर जोड़ कर मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा ?

क्या तेरे महान् आकाश के नीचे निर्जन नीरव अवस्था में नम्र हृदय से मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा।

क्या तेरे इस कर्म ग्रस्त संसार में जो परिश्रम और संग्राम के कोलाहल से आकुल है, दौड़ धूप में लगे हुये लोगों के बीच में रहते हुये मैं तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा ?

हे राजाधिराज ! जब इस ससार में तेरा कार्य समाप्त हो जायगा तो क्या मैं एकान्त और नीरव दशा में तेरे सन्मुख खड़ा रहूंगा ?

मैं तुझे अपना ईश्वर मानता हूं और इसलिए तुझ से दूर खड़ा रहता हूं मैं तुझे अपना नहीं समझता और इसलिए तेरे निकटतर आने का साहस नहीं करता हूं किन्तु मैं तुझे अपना मित्र नहीं समझता और इस लिये तेरा हाथ नहीं पकड़ता।

जहां तू नीचे उतर कर आता है और अपने आपको मेरा बतलाता है वहां तुझे अपने हृदय से लगाने और अपना साथी मानने के लिए में खड़ा नहीं होता।

भाइयो ! मैं केवल तुम्हीं को अपना भ ई समझता हूं। मैं उनकी पर्वाह नहीं करता मैं अपनी कमाई में उनको सम्मिलित नहीं करता और इस प्रकार तुझे भी अपने सर्वस्व में हिस्सा नहीं देता।

मैं सुख दुःख में उनका साथ नहीं देता और इस प्रकार तेरे पास भी नहीं खड़ा होता। मैं दूसरों के लिये अपना जीवन देने से हिचकिचाता हूं और इस प्रकार जीवन महासागर में गोता नहीं लगाता।

आरती

(श्री महाराज जी की अन्तिम वाणी)

लहरा रही है ज्योति चिदानन्द की।
चिदानन्द की परमानन्द की॥
सकल ब्रह्माण्डों के पृष्ठ भाग पर।
सत्ता स्फूर्ति सब को दे रही है निजानन्द की॥ १॥
सब ब्रह्माण्डों के बाहर भीतर।
हृदय कमल में सूर्य मण्डल में॥
जगमगा रही है ज्योति महानन्द की॥ २॥
यह संसार असार है अन्तिम।
एक ही ज्योति है अखण्डानन्द की॥ ३॥
सूर्य चन्द्र विद्युत और तारे।
अग्नि ज्योति है भवानन्द की॥ ४॥
ज्योति बिना कुछ और नहीं है।
अहं ज्योति है ज्ञान यही है॥
अहं ब्रह्मास्मि ज्ञान की ज्योति।
जग रही है घट घट परमानन्द की॥ ५॥

आश्रम के उद्देश्य

१–श्री भगवान की भक्ति का प्रचार करना।

२–गोरक्षा और उसके लिये गोचर भूमि छुड़वाना।

३–जंगलों में वृक्ष लगवाना और उसके बीच में जलाशय बनवाना।

४–शिक्षा का प्रचार करना जिस में मनुष्य मात्र विद्या लाभ कर सकें और प्राचीन प्रथा को फिर प्रचलित करना।

५–बीमारियों के अवसर पर दवाई बांटना।

६–आस पास के ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा शान्ति और प्रेम बढ़ाना।

७–सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जागृत करना।

८–राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

मुद्रक व प्रकाशक:—
भूमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस," गोकल बाजार, रेवाड़ी।